श्री राम के भक्तों को सादर सप्रेम समर्पित् ।

"गिरीश"

"कीर्तन"

सकल पाप हारी कीर्तन ।

राम नाम सबसे बडा, तीन लोक के माहि ।
वेद रटे ब्रह्मा रटे, नारद शारद गाहि ।।

श्री राम राम श्री राम राम श्री रामा, सब पातक नाशक सुखद सुमंगल धामा ।
श्री राम नाम सब पापो को हर लेता, श्री राम नाम पत्थर पारस कर देता ।।
श्री राम नाम है काम धेनु की नाईं, श्री राम नाम है कल्प वृक्ष की छाई ।
श्री राम नाम जिसके मुख मंदिर माई , वह साधु संत श्री राम हि की परछाईं ।।

राम नाम पीड़ा हरे, पातक हरे महान ।
सुने सुनावे स्नेह से, जो रख मन मे ध्यान ।।

श्री राम नाम जो एक बार ले लेता, वह मानव जीवन सत्य सफल कर देता ।
श्री राम नाम जिसको जपना आजाता, वह निर्धन भी जग मे सब कुछ पा जाता ।।
श्री राम नाम की पकडी जिसने डोरी, उस बड़ भागी ने काल पास को तोडी ।
श्री राम नाम की खिली जहा फुलवारी, उस घर की शोभा तीन लोक से न्यारी ।।

दो अक्षर के राम मे, बसा सकल संसार ।
जो रटता श्रीराम को, उसका बेड़ा पार ।।

सिया वर राम चन्द्र की जय । पवन सुत हनुमान की जय ।
उमापति महादेव की जय । बोलो भई सब सन्तन की जय ।

भक्त "गिरीश"

प्रस्तावना

रामायण आर्यों का धर्म ग्रन्थ है। निष्ठा और प्रेम के साथ भक्ति-भाव के रूप मे आज भी हिन्दू समाज इस ग्रन्थ को विशेष महत्व देता है। रामायण के प्रति समाज की अधिक रुचि और भक्ति ने कवियों और लेखको को अनेक प्रकार से रामायण को लिखने की प्रेरणा दी है। श्री गिरीशजी उन प्रेरणा पाने वाले कवियो मे एक है।

श्री गिरीशजी सादे, संयमी और त्यागी, ब्राह्मण का सत्य स्वरूप, सामाजिक कार्यकर्त्ता एवं अकेली धोती से तन ढकने वाले निष्ठावान जन-सेवक है।

गिरीश रामायण अपने ढग की नई शैली से लिखी गई रामायण है जिसका महत्व निष्ठावान भक्त-जन अधिक समझ सकेगे।

कुम्भाराम आर्य

श्रीराम चक्रम्

शुभाशुभ एवं फलाफल यंत्र

श्रीराम का ध्यान हृदय मे धर के जिस बात का और कार्य का शुभाशुभ एव फलाफल जानना हो, दिन मे पूर्व की ओर तथा रात मे पश्चिम की ओर मुंह करके, दाहिने शुद्ध हाथ से, इस यंत्र के ऊपर एक चावल श्रद्धा से चढादे, जिस संख्या के स्थान पर चावल चढ़े उस संख्या का दोहा रामायण की किसी भी अपनी मन चाही अध्याय को खोलकर पढलें और उस दोहे के अनुसार शुभाशुभ एवं फलाफल जानलें ।

प्रार्थना

राम के भक्तो को संसार मे अहिंसा, शान्ति, सत्य, प्रेम, न्याय का प्रचार करना चाहिए और साथ साथ यह उपदेश भी करना चाहिए कि संसार मे कोई भी प्राणी यदि हिंसा करता है, अशान्ति पैदा करता है, झूठ बोल कर संसार को धोका देता है, विश्वभ्रातृत्व प्रेम मे युद्ध के बीज बोकर, संसार को मौत के मुंह मे धकेलता है, तो ऐसे अन्यायी पापी प्राणी से, राम के भक्तों को किंचित मात्र भी नहीं डरना चाहिए और निर्भय होकर, वक्षस्थल तान कर, आगे बढ़कर जैसे राम ने रावण का नाश किया वैसे ही उसे और उसके द्वारा संसार मे फैलाए गए विनाशकारी कीटाणुओ का तुरन्त नाश कर देना चाहिए। यही रामायण का ॐ निर्मल आदेश है।

वह रामायण का पाठक और पुजारी ही क्या? वह राम का भक्त और सेवक ही क्या? जिसमे हिंसक के दांत तोड़ कर फेक देने की प्रबल शक्ति नही। जिसमे आक्रमणकारी का मुंह तोड़ कर मिट्टी मे मिला देने वाला प्रचंड पराक्रम नही। जिसमे संसार पर युद्ध की ज्वाला के अंगारे बरसाने वाले क्रूर, तलवार की धार से शान्तिपूर्ण संसार का रक्त बहाने वाले निर्दयी, बलात्कार से विश्व को अपने पैरों के नीचे दबाकर कुचलने वाले अन्यायी को भस्म कर देने वाला सूर्य के समान तेज नही।

आज राम के भक्तों और रामायण के पाठकों की परीक्षा का समय है। आज राम और रामायण के अनुयायियो के जीवन और मरण का प्रश्न है। आज राम और रामायण के पुजारी, एवं भक्तों के सर पर संकट काल है।

आज हम सब राम के उपासक, रामायण के मानने वाले सनातनी आर्य, अपने शौर्य का परिचय देकर, विनाश होते हुए विश्व को बचाने का संकल्प ले। हिन्दू संस्कृति पर आक्रमणकारी विदेशियो! विधर्मियो! विजातियों से लोहा लेने का प्रण ले। आज हम राम और रामायण को साथ लेकर शत्रुओ से सम्बन्धित शत्रुओं को परास्त करने की प्रतिज्ञा लें।

आज हम हनुमान बनें, सुग्रीव और जामवन्त बने, अंगद और नल-नील बनें, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुहन बने, वसिष्ठ और विश्वामित्र बनें। आज हमारी मातायें और बहिन बेटियें सीता बने। आज हम दुष्ट, पापी, अनाचारी, अत्याचारी, धर्म द्रोही, गौ-ब्राह्मण द्रोही, देश द्रोही, राम और रामायण द्रोही, राक्षस रावण की लंका को फूंककर, विश्व मे राम विजय की दुंदुभि बजाकर, सगार्व विजय ध्वज फहरा कर सीताराम की जय-जयकार करें। यही राम और रामायण के प्रेमी भक्तों से मेरी प्रार्थना है।

सुजानगढ़ — प्रार्थी

जन्माष्टमी विक्रम सं. २०२१ — "गिरीश"

गिरीश रामायण।

अध्याय १

बाल काण्ड

श्री गणेश श्री शारदा, ब्रह्मा विष्णु महेश।
कर प्रणाम श्रद्धा सहित, मात पिता गुरु देश ॥१॥

हरि कथा करू प्रारम्भ सुनों नर नारी, हरि कथा पवित्रं परम पुनीतं प्यारी।
हरि कथा भाग्य से दुर्लभ जग मे पानी, हरि कथा सुने सो सबसे उत्तम ज्ञानी॥
हरि कथा कोटि यज्ञो के सम कल्याणी, हरि कथा पढे सो धन्य विश्व मे प्राणी।
हरि कथा भक्त प्रेमी की महिमा भारी, हरि कथा कहे सो हरि का आज्ञाकारी॥

हरि हरे सब पाप को, कथा हरे सब पीर।
सुने सुनावे ध्यान से, जो रख मन में धीर ॥२॥

हरि कथा प्रथम मुनि वाल्मीकि प्रगटाई, फिर तुलसीदास ने घर घर मे पहुचाई।
हरि कथा राम का नाम सदा सुखदाई, जिसकी महिमा का वर्णन किया न जाई॥
हरि कथा राम की रामायण मे गाई, श्री रामायण मे राम कथा सरसाई।
हरि कथा जहा हो सब देवन का वासा, जह रामायण हो तीर्थ समान निवासा॥

रामायण की कथा का, होत जहां सत्संग।
गंगा जमुना सरस्वती, वहां प्रयाग प्रसंग ॥३॥

श्री रामायण का नाम ही मगलकारी, श्री रामायण का कीर्तन कलिमल हारी।
श्री रामायण ही सब ग्रन्थो की माता, श्री रामायण ही भारत भाग्य विधाता॥
श्री रामामण का पठन पाठ हितकारी, श्री रामायण की शिक्षा दीक्षा न्यारी।
श्री रामायण आदर्श शास्त्र भक्ति का, श्री रामायण प्रतिबिंब आर्य शक्ति का॥

रामायण ही राष्ट्र की, जागृति का जय मन्त्र ।
इसमें सञ्चित संस्कृति, सत्य सनातन तत्र ॥४॥

श्री रामायण मे वैदिक रीति बखानी, जिसको ऋषि मुनियो ने बहुविधि से जानी ।
श्री रामयण मे चार वेद प्रतिपादित, चारो वर्णाश्रम धर्म कर्म निर्धारित ॥
श्री रामायण सा सार ग्रन्थ ना दूजा, जिससे होती साकार प्रभु की पूजा ।
श्री रामायण की कथा अगाध अपारा, मै लिखता लेकर सीताराम सहारा ॥

आओ श्री हनुमान जी, करो कृपा की कोर ।
रामायण श्रोता बनो, विनय करूं कर जोर ॥५॥

उत्तर दिशि में है अनुपम उच्च हिमालय, जिसकी चोटी पर बना है वृहद शिवालय ।
जहा रहते है परिवार सहित शिव शकर, जो जपते है सत् चित् आनन्द निरन्तर ॥
श्री राम राम रटते थे शिव कैलाशी, जब सुनी पार्वती बोली हे अविनाशी ।
हे महादेव श्री राम नाम है किन का, करते निशि वासर आप जाप है जिनका ॥

सुनकर गिरिजा के वचन, बोले गिरिजा नाथ ।
मै जपता उनको प्रिये, जिनके सब कुछ हाथ ॥६॥

जिनकी इच्छा के बिना पात ना हिलता, जिनकी आज्ञा के विना फूल ना खिलता ।
ये सूर्य चन्द्र आकाश पवन जलधारा, ये जीव जन्तु ब्रह्माण्ड भूमि ससारा ॥
सारी रचना जो भी दिखलाई देती, ये घास फूस घर महल झोपडी खेती ।
सब का स्वामी बस एक राम को जानो, अन्तर की आखें खोल उन्हे पहिचानो ॥

पूर्ण ब्रह्म परमात्मा, निराकार साकार।
सूक्ष्म और विराट सब, राम हि के आकार ॥७॥

जिनकी लीला का पार न कोई पाता, जिसको पूछो वह ये ही कह बतलाता।
श्रुति उपनिषद दर्शन पुराण स्मृति सारे, जब भेद न पाया नेति २ कह हारे॥
जब गौ ब्राह्मण भक्तो पर विपदा आती, जब पाप ताप से धरती मा दब जाती।
तब लेकर के अवतार राम ही आते, करते अधर्म का नाश धर्म फैलाते॥

दो अक्षर के राम में, बसा सकल संसार।
जो रटता श्री राम को, उसका बेड़ा पार ॥८॥

श्री राम नाम जो एक बार ले लेता, वह मानव जीवन सत्य सफल कर देता।
श्री राम नाम सुखधाम सुधा का सागर, रखते रसना पर जो होते नर नागर॥
श्री राम नाम जिसको जपना आ जाता, वह निर्धन भी जग मे सब कुछ पा जाता।
श्री राम नाम जिसके मुख मन्दिर माही, वह साधु सत श्री राम हि की परछाई॥

इतना कह शिव चुप हुए, देख शिवा की ओर।
रामामृत पी शिवा का, नाच उठा मनमोर ॥९॥

तब बोली मीठे बैन शिवा कर जोड़े, क्यो मौन हो गए आप बोल कर थोडे।
हे नाथ राम की सारी कथा सुनाओ, जो जो लीलाये की सारी बतलाओ॥
मत बात तनिक भी मुझसे आप छिपाना, जो कुछ जानो सो सब ही कहते जाना।
श्री राम नाम का कीर्तन सुन श्रीमुख से, मै फूली नही समाती सचमुच सुख से॥

कोमल कलि से सुभाषित, स्नेह सने मधुबोल।
विकसे मुख से उमा के, करते अधर किलोल ॥१०॥

जब सुने सती के बैन प्रेम पुलकाए, हो कर प्रसन्न तब शिवशंकर मुस्काए।
बोले रस घोले मधुर वचन मन भाए, राई के पीछे पर्वत नही छिपाए॥
जो पति पत्नी आपस मे बात छिपाते, वे पतित अधर्मी कुंभी पाक मे जाते।
श्री राम कथा मे स्वयं मुझे रस आता, फिर तुम से तो मैं कुछ भी नही छिपाता॥

यह कह कर कहने लगे, रामायणं महेश।
आ आ कर सुनने लगे, नारद शारद शेष ॥११॥

सतयुग बीता फिर त्रेतायुग जब आया, उसने धीरे धीरे अधर्म फैलाया।
था लका पति रावण राक्षस एक नामी, पडित योद्धा पापी प्रतिगामी कामी॥
सुर असुर सृष्टि के सब उस से घबराते, तीनो लोको के राजा शीश झुकाते।
उस युग मे उससा और नही था कोई, वह करता अपने मन मे आता सोई॥

वह चरित्र से था गिरा, था कुसंग में लीन।
उसके अत्याचार से, पृथ्वी हो गई दीन ॥१२॥

तब पृथ्वी मा ने गौ का रूप बना कर, ऋषि मुनि देवो से की पुकार जा जा कर।
ऋषि मुनि सुर गौ माता को ढाढस देकर, पहुंचे ब्रह्मा के पास धेनु को लेकर॥
बोले ब्रह्मा जी से सब संकट टारो, पृथ्वी माता के सर से भार उतारो।
ब्रह्मा बोले सुमरो हरि अन्तर्यामी, वे ही हम सब के एक मात्र है स्वामी॥

चरण शरण हरि के चलो, वे है दीन दयाल ।
सकल मनोरथ पूर्ण हों, वे है पृथ्वी पाल ॥१३॥

सुन कर ब्रह्मा के वाक्य देवता सारे, कोई बोले बैकुण्ठ चलो हरिद्वारे।
कोई बोले वे क्षीर सिंधु मे रहते, कोई कुछ कोई कुछ कोई कुछ कहते ॥
तब मैं बोला हरि बसे सकल जग माही, बिन हरि के जग मे जगह एक भी नाही।
जल थल नभ वायु सब मे हरि का डेरा, वहं प्रगट हो गए भक्तो ने जहं टेरा ॥

जाने का क्या काम है, धरो प्रभु का ध्यान ।
स्वयं यहाँ आजायंगे, गरुड़ चढ़े भगवान ॥१४॥

जब मैंने यो कह कर सीधी समझाई, तब बात सबो के मन मे गई समाई ।
तब देवो ने मिल हरि को तुरत पुकारा, हरि आ पहुंचे तत्काल गरुड असवारा ॥
बोले हरि मै रक्षा करता हरिजन की, मैं समझ गया सब बात तुम्हारे मन की ।
कुछ धैर्य धरो पृथ्वी को फिर समझाया, मै शीघ्र तुम्हारे हित मानव बन आया ॥

राजा दशरथ के यहां, पुरी अयोध्या धाम ।
कौशल्या के उदर से, जन्मूंगा बन राम ॥१५॥

सुन कर हरि के ये वचन मंडली सारी, हर्षित हो हरि की जय जय कार उचारी ।
देकर वर झट हरि हो गए अर्न्तध्याना, पृथ्वी बोली जय जय विष्णु भगवाना ॥
ब्रह्मा बोले बंदर बन कर सुर सारे, भारत भूमि मे चलो प्रभु के प्यारे।
करनी होगी हमको हरि की अगुवाई, वानर सेना द्वारा सहाय सेवकाई ॥

इस प्रकार सब देवता, कर निश्चय यह बात।
भारत भूमि में गए, बन वानर की जात ॥१६॥

जा देखी भारत मा की दशा दुखानी, तब सब की आखो मे भर आया पानी।
ना जप तप देखा सुनी न श्रुति की वाणी, अधिकाश धर्म पथ से च्युत देखे प्राणी॥
ना दान पुण्य स्वाध्याय हि दिया दिखाई, सेवा पूजा व्रत यज्ञ और शुचिताई।
देखे दुखिया गौ ब्राह्मण पीडित पंडित, देखे मंदिर विद्यालय आश्रम खडित॥

उधर एक दिन अवधपति, श्री दशरथ महाराज।
गुरु वशिष्ठ के घर गए, पुत्र प्राप्ति के काज ॥१७॥

देखा वशिष्ठजी ने श्री नृप को आया, नृप कर प्रणाम चरणो मे शीश झुकाया।
दे शुभाशीश गुरुवर ने गले लगाया, फिर देकर आसन आदर सहित बिठाया॥
पूछा महऋषि ने कुशल क्षेम वृत सारा, तब विनय विभूषित नृप ने वचन उचारा।
गुरु चरण कृपा से सभी बात का सुख है, पर पुत्र नही है इसी बात का दुख है॥

सुन दशरथ के ये वचन, ऋषि वशिष्ठ धर ध्यान।
बोले होगे शीघ्र ही, चार पुत्र गुणवान ॥१८॥

जिनके यश का झंडा जग मे फहरेगा, जब तक धरती होगी तब तक लहरेगा।
शृंगी ऋषि को आमत्रण दे बुलवाओ, उनसे शुभ दिन पुत्रेष्ठि यज्ञ करवाओ॥
ले गुरु आज्ञा दशरथ अपने घर आए, शृंगी आदिक मुनि पडित सभी बुलाए।
रचना करवाई हवन यज्ञ शाला की, आहुति देन लगे मुनि जप माला की॥

वैदिक शास्त्र विधान से, किया यज्ञ अवधेश।
अब देनी बाकी रही, पूर्णाहूति शेष ॥१६॥

जब पूर्णाहूति हुई यज्ञशाला मे, तब हवनकुण्ड से प्रगटे हरि ज्वाला मे।
था कर मे उनके हवि का स्वर्ण कटोरा, मानो पाया दशरथ ने पुण्य बटोरा ॥
सब ही के हर्षित चकित नयन उन पर थे, जब बढे देन अरु लेन देव नृप कर थे।
देते हवि बोले यज्ञदेव हे दशरथ, दो बाट रानियो को हो सफल मनोरथ ॥

जो आज्ञा कह जोड़ कर, लिए क्षीर का पात्र।
आज कृतार्थ हो गया, नृप दशरथ का गात्र ॥२०॥

शृ गी वशिष्ठ ऋषियो को दे बहुदाना, सानन्द सफल कर दशरथ यज्ञ विधाना।
पहुँचे झट अन्तःपुर मे श्री महाराजा, जहं सजे हुए थे अनुपम स्वर्गिक साजा ॥
कौशल्या, केकई और सुमित्रा आई, पाकर प्रसाद हवि का मन मे हर्षाई।
हवि का प्रसाद हरि के अर्पण कर खाया, जिसके प्रताप से मनवाछित फल पाया ॥

दिन बीते रजनी गई, बीत गए दश मास।
चैत्र शुक्ल नवमी दिवस, प्रगटे विश्व प्रकाश ॥२१॥

तब दिए अचानक मंगल वाद्य सुनाई, रनवासो से झट दौड दासिया आई।
सब देन लगी दशरथ को पुत्र बधाई, साकेत पुरी मे होने लगी सजाई ॥
घर घर मंगल मय गीत नृत्य शुभ नादा, जन जन के मन मे अगणित सुख आल्हादा।
आए रघुकुल मे हरि लेकर अवतारा, हरने भक्तो की पीर पृथ्वी का भारा ॥

गिरीश रामायण

अध्याय २

बाल काण्ड

•

आज अयोध्या सज रही, कर सोलह शृंगार।
नख शिख वर्णन क्या करूं, पाऊं थाह न पार ॥१॥

शुभ नाम करण का आज महोत्सव दिन है, बढता जाता उत्सव प्रति पल छिन २ है।
लग गया राज मंदिर मे मनहर मेला, पहुचे वशिष्ठ लेकर पतरा शुभ वेला ॥
मंगल वाद्यो की मंगल ध्वनिया वाजी, निकसी जच्चागृह से कौशल्या माजी।
उनके पीछे केकई सुमित्रा आयी, तीनो की गोदे पुत्रो से पुलकाई ॥

अगणित साथ सहेलिया, गावे मंगल गान।
कौशल्या की गोद में, मुस्कावे भगवान ॥२॥

सब देव ऋषि मुनि दर्शन करने आए, दशरथ महाराजा फूले नही समाए।
जब गुरु वशिष्ठ के नृप ने पाव पखारे, तब भूदेवो ने वैदिक मंत्र उचारे ॥
पी गुरु चरणामृत पत्नि सहित नरेशा, पा गए पुण्य पृथ्वी पर जो था शेषा।
फिर हुई देव पूजा विधिवत्त शुभकारी, गणपति नवग्रह वरुणादि सबो की सारी ॥

फिर दर्शन कर सूर्य का, करके अर्घ प्रदान।
दिया रानियों ने विपुल, स्वर्ण धेनु का दान ॥३॥

दशरथ राजा ने खोल दिया भंडारा, जिसका जो चाहे सो ले जाये सारा।
बंदीगण करने लगे वंश की स्तुति, रघुकुल की कीर्ति रीति नीति विभूति ॥
ब्राह्मण चारण सब जय जय कार उचारे, बज रहे राज द्वारो पर ढोल नगारे।
शहनाई वीणा शंख मजीरे बासी, बज रही भैरवी टोडी भीम पलासी ॥

गुरु वशिष्ठजी उस समय, ज्योतिष के अनुसार।
चारो शिशुओं का किया, सुन्दर नामोच्चार ॥४॥

कौशल्या जी के राम भरत केकई के, लक्ष्मण अरु शत्रुहन श्री सुमित्राजी के।
जब सुने नाम तब बजे शंख औ भेरी, पुष्पो की वर्षा हुई अनेको बेरी॥
श्रीराम लखन अरु भरत शत्रुहन भाई, चारो की छवि का वर्णन किया न जाई।
जब झूले मे चारो झूले मुस्कावे, तब दंत देख कर चंद्र सूर्य सकुचावे॥

धीरे धीरे बढ़े फिर, चारो राजकुमार।
चारो भाई एक से, करे परस्पर प्यार ॥५॥

दशरथ राजा के घर का आगन सोहे, जब ठुमक ठुमक कर चले राम मन मोहे।
कटि मे हीरो की कनक मेखला राजे, सुन्दर पावो मे मधुर पैंजनी बाजे॥
कानो मे कुन्डल गल बैजन्ती माला, कर मे कडुक बंशी चक्री औ प्याला।
संग लखन भरत औ शत्रुहन भी डोले, तुतला तुतला कर चारो भाई बोले॥

रूप शील गुण नम्रता, बुद्धि ज्ञान विवेक।
कर्म वचन मन तन वसन, चाल ढ़ाल सब एक ॥६॥

चारो भाई जब हो गए बडे सयाने, तब गुरु वशिष्ठजी विद्या लगे पढाने।
सबसे पहिले यज्ञोपवीत दिलवाई, फिर संध्या प्राणायाम क्रिया सिखलाई॥
व्याकरण वेद साहित्य न्याय भूगोला, इतिहास गणित ज्योतिष संगीत खगोला।
व्यायाम शस्त्र सचालन अश्व सवारी, आयुर्वेदिक अरु ललित कलायें सारी॥

सब विद्याओं में निपुण, पूर्ण हो गये राम ।
अब कुछ कुछ सीखन लगे, राजकाज का काम ॥७॥

एक दिन ऋषि विश्वामित्र राम गृह आये, कर लिए कमंडल सर पर जटा बढ़ाए ।
जब देखा दशरथ ने ऋषिवर को आधा, कर स्वागत सिंहासन पर पास बिठाया ॥
कर प्रेम सहित पंचोपचार पुनि बोले, श्रद्धा भक्ति से वचन शुद्ध अनमोले ।
है धन्य भाग्य मेरे जो आप पधारे, कट गए आज मम भव के पातक सारे ॥

जो कुछ आज्ञा हो मुझे, कहिए कृपा निधान ।
ऋषिवर के उपयुक्त मैं, कर न सका सन्मान ॥८॥

इतने ही मे चारो भाई वहं आए, ऋषि के चरणो मे सादर शीश झुकाए ।
चिरजीवि भव ऋषि ने दी शुभ आशीशा, फिर देखा ऋषि ने राम रूप जगदीशा ॥
कर प्रभु के दर्शन ऋषि मन मे सुख पाए, श्री रामचंद्र के मुख पर नयन लगाए ।
फिर बोले विश्वामित्र सुनो महाराजा, मैं आया हूं लेकर आवश्यक काजा ॥

झट बोले कर जोड़ कर, श्री दशरथ महाराज ।
प्रगट शीघ्र कर दीजिए, जो हो मुझसे काज ॥९॥

बोले ऋषि कुछ दिन राम लखन दे दीजे, मन मे चिंता अरु क्षोभ तनिक मत कीजे ।
मैं रखूंगा इनको प्राणो से प्यारे, ये होंगे मेरे यज्ञो के रखवारे ॥
राक्षस मुझको शुभ कर्म न करने देते, कर दिए नष्ट अरु भ्रष्ट यज्ञ ही केते ।
राक्षस निशंक मनमाने उधम मचाते, ब्राह्मण साधु ऋषि गौ को बहुत सताते ॥

सुनकर विश्वामित्र के, वचन अयोध्या नाथ।
काप गए घबरा गए, बोले भय के साथ ॥१०॥

हे मुनिवर राम लखन को रहने दीजे, धन धान्य राज्य सिंहासन सब ले लीजे।
ये बालक राक्षस मे लड़ना क्या जाने, ये हैं अबोध अनजान अबल असयाने ॥
मैं स्वय चलूंगा साथ सैन्य ले सारी, मैं स्वयं करूंगा प्रभु यज्ञ की रखवारी।
हे ऋषिवर ये शुभ अवसर मुझको दीजे, मैं चलूं सग स्वामी के आज्ञा कीजे ॥

गुरु वशिष्ठ बोले तुरत, दीजे राजकुमार।
ना मत कीजे नृपति वर, लीजे पुण्य अपार ॥११॥

सग मे ऋषि के कर दीजे राजकुमारा, मत मन मे कीजे चिंता सोच विचारा।
श्री रामचंद्र को नर नारायण जानो, मैं कहता हूं सो निश्चय कर कर मानो ॥
कर नाम आपका शीघ्र राम आवेंगे, संग सुयश सुमगल विजय कीर्ति लावेंगे।
श्रीराम लखन को शीघ्र विदा दे दीजे, ऋषि मुनियो के यज्ञो की रक्षा कीजे ॥

सुन वशिष्ठ के वर वचन, हुआ नृपति को ज्ञान।
धर्म कर्म जागृत हुए, कुल मर्यादा मान ॥१२॥

बोले दशरथ साहस कर राम लखन से, मत पीठ दिखाना कभी धर्म के रण से ॥
जो कुछ भी ऋषि आज्ञा दे सो सब करना, राक्षस पिशाच दैत्यो से कभी न डरना।
है कर्म क्षत्रियो का रक्षा करने का, निज धर्म देश जाति के हित मरने का ॥
सर्दी गर्मी अरु भूख प्यास सब सहना, जाओ ऋषिवर के साथ संग मे रहना ॥

जो आज्ञा कह जोर कर, कर अनुजों को प्यार ।
मात पिता गुरु चरण छू, राम लखन सुकुमार ।।१३।।

जब चले राम अरु लखन ऋपि के संगा, सबकी आखो से वही अश्रु की गगा ।
की देवो ने पुष्पो की नभ से वर्पा, तब राम प्रभु का मन अन्तर से हर्पा ।।
चलते चलते जब सरयू का तट आया, तब करा आचमन ऋपि ने मंत्र सिखाया ।
फिर बला अतिबला दो विद्या बतलाई, जो सब कामो मे होती सदा सहाई ।।

तृण शैया पर शयन कर, कर सेवा विश्राम ।
प्रात होत पुनि चल दिए, ऋषिवर के संग राम ।।१४।।

दोनो भाई प्रमुदित ऋपि के सग धाए, पथ मे भीपरण जंगल जंतु बहु आए ।
श्रीराम लखन बोले ऋपिवर से वाणी, इस मातृभूमि मे क्यो ना मानव प्राणी ।।
क्यो इस पृथ्वी पर रहते जनता डरती, क्यो बिन बोए बिन बसे पडी यह धरती ।
तब बोले विश्वामित्र सुनो रघुराई, रहते इस पृथ्वी पर दानव दुखदाई ।।

गौ ब्राह्मण मानव सभी, रहते यहां डराय ।
दैत्यों की मां ताडका, सो सबको खा जाय ।।१५।।

वह देखो वह आधी पहाड सी आई, लो धनुप बाण कर मे संभाल रघुराई ।
यह पिशाचिनी है महा भयकर भारी, इसके कारण से मानव महा दुखारी ।।
हे राम लखन इसको झटपट से मारो, गौ ब्राह्मण मानव साधु सत को तारो ।।
पा ऋपि आज्ञा बरसान लगे प्रभु बाणा, हर लीना दुष्टा दैत्या का झट प्राणा ।।

मरती दैत्या ताड़का, खा कर पडी पछाड़ ।
पृथ्वी पर आकाश से, मानो पड़ा पहाड ॥१६॥

हो हर्षित सब देवो ने शख बजाए, ऋषिवर ने झट से झुक कर गले लगाए ।
हो गया मुनि को तत्क्षण प्रभु का भाना, अन्तर की आखे खोल तुरत पहिचाना ॥
फिर आगे बढ मुनियो के आश्रम आए, जिनकी रचना को देख राम ललचाए ।
ऋषि विश्वामित्र के आश्रम की छवि न्यारी, फल झूल रहे अरु फूल रही फुलवारी ॥

गौ के बछड़े रांभते, पक्षी करते गान ।
राम लखन निवृत हुए, कर मंजन औ ध्यान ॥१७॥

बोले ऋषि से फिर राम लखन यह वाणी, कीजे निशक हो यज्ञ आप जग त्राणी ।
हम सावधान हो रक्षा पूर्ण करेंगे, जो आवेंगी बाधाएं सभी हरेंगे ॥
हो कर प्रसन्न ऋषि ने वहु आयुध दीने, श्रीराम लखन ने विधिवत धारण कीने ।
जब करन लगे मुनि यज्ञ विशोक विशाला, प्रगटी प्रचड हो गगन स्पर्शी ज्वाला ॥

स्वाहा स्वाहा सुनि जब, मारिच और सुबाहु ।
आए सेना सग ले, ऋषि रजनीकर राहु ॥१८॥

जैसे दीपक को देख पतंगे आते, अरु आ करके लो से लग कर जल जाते ।
वैसे ही ज्वाला को लख राक्षस आए, श्री राम लखन ने यमपुर उन्हे पठाये ॥
रक्षक बन ऋषि यज्ञो के श्रीभगवाना, कर दिया सफल ऋषियो का यज्ञ विधाना ।
सब देवो ने मिल मंगल ध्वनिया कीन्ही, सब ऋषियो ने मिल शुभ आशीशे दीन्ही ॥

बोले विश्वामित्रजी, राम तुम्हारा नाम।
जो लेगा उसके सदा, पूर्ण होयगे काम ॥१६॥

अब हमको होगा मिथिलापुर को जाना, श्री जनकराज ने धनुप यज्ञ है ठाना।
आया है उनका श्रद्धा सहित निमंत्रण, करना होगा हे राम पूर्ण उनका प्रण ॥
चल दिए ऋषि ले राम लखन को संगा, पहुँचे जहं वहती तरण तारणी गंगा।
श्री गंगा मा की सारी कथा सुनाई, जिस तरह भगीरथ के प्रयत्न से आई ॥

कर गंगा का आचमन, आगे चरण वढ़ाय।
गौतम ऋषि आश्रम निकट, पहुँचे रघुपति जाय ॥२०॥

जब देखा आश्रम को उजडा सुनसाना, तब प्रश्न किए ऋपिवर से रघुवर नाना।
जिस तरह इन्द्र ने छली सुशील अहिल्या, गौतम ऋपि के अभिशाप से वन गई शिल्या ॥
यह पापाणी गौतम ऋपि की है नारी, छू दो चरणो से तर जावे वेचारी।
पा गुरु आज्ञा रघुवर ने पाव छुवाया, छू चरण तुरत हो गयी नारी की काया ॥

परम कृपा कर राम ने, किन्ह अहिल्योद्धार।
चरण पकड़ श्रीराम के, लिपट गई मुनि नार ॥२१॥

फिर गद्गद् हो श्रीराम हि राम उचारा, श्रीराम नाम की महिमा का ना पारा।
श्री राम नाम सम मंत्र न जग मे कोई, जो जपता निश्चय से तर जाता सोई ॥
श्रीराम नाम सब पापो को हर लेता, श्रीराम नाम पत्थर पारस कर देता।
श्रीराम नाम है कामधेनु की नाई, श्रीराम नाम है कल्प वृक्ष की छाई ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ३

बाल काण्ड

●

जब पहुँचे मिथिलापुरी, राम लखन मुनिराय।
आव भगत कर जनक ने, डेरा दीन्ह लगाय ॥१॥

कर कृपा दीन पर मुनिवर भले पधारे, हो गया सफल मम धनुष यज्ञ बिन टारे।
संग के सुकुमारो का प्रभु परिचय दीजे, क्या नाम धाम इनका है अनुग्रह कीजे॥
लख कर सुकुमारो की सुन्दर छवि प्यारी, मै भूल गया तन मन की सुध-बुध सारी।
दर्शन देवो सा है इनका शुभकारी, सुन वचन जनक के ऋषि ने बात उचारी॥

इनका नाम है रामजी, इनका लक्ष्मण लाल।
दशरथ जी के पुत्र है, भक्तो के प्रतिपाल ॥२॥

ये रघुवशी है सकल गुणो के सागर, भारत माता के सच्चे पुत्र उजागर।
इनकी समता का शूर न जग मे कोई, मैने सारी पृथ्वी को लगभग जोई॥
इनके दर्शन देवो को भी दुर्लभ है, कर रहे जिसे हम अतिशय आज सुलभ है।
श्री रामचन्द्र है नर तन मे अवतारी, मर्यादा पुरुषोत्तम अरु लीलाधारी॥

सुन कर विश्वामित्र के, वचन जनक महिपाल।
शीश झुका कर जोर कर, बोल उठे तत्काल ॥३॥

प्रभु पद पंकज से पावन हो गई मिथिला, मन मनोकामना पूर्ण हो गई निखिला।
इस तुच्छ दास अनुचर को आज्ञा दीजे, कर्तव्य कर्म की गुरुवर दीक्षा दीजे॥
सुन जनक राज की श्रद्धा सयुत वाणी, बोले ऋषि विश्वामित्र गिरा कल्याणी।
है धन्य आपकी भक्ति भावना प्रज्ञा, सब भाति सफल होगा नृपवर धनुयज्ञा॥

जो कुछ करना चाहते, मन में आप विचार।
सो सब निश्चित होयगा, धर्म कर्म अनुसार ॥४॥

हे नृपवर हम सब भांति सुखी है आकर, तुम देखो अपना काम काज घर जा कर।
जाते जाते नृप हाथ जोड कर बोले, मम भाग्य द्वार थे बन्द आन प्रभु खोले ॥
फिर बोले विश्वामित्र राम से वचना, जाओ देखो तुम जनकपुरी की रचना।
जो आज्ञा कहकर सज धज राम सिधारे, रघुकुल के तिलक शिरोमणि लक्ष्मण प्यारे ॥

देख रहे थे जिस समय, जनकपुरी को राम।
नर नारी देखन लगे, राम रूप छवि श्याम ॥५॥

करने आपस मे लगे बात नर नारी, ये दोनो है सुकुमार देव धनुधारी।
है धन्य भाग्य जो दर्शन इनके पाए, श्री राम लखन का सबको रूप लुभाए ॥
देखी दोनो भाई ने नगरी सारी, सुन्दर गवाक्ष अरु सुघडित उच्च अटारी ॥
था शिल्प कला का काम अमूल्य अनोखा, सुन्दर चित्रो से चित्रित मनहर चोखा ॥

हाट बाट को देखते, पुष्पवाटिका जाय।
देख सिया को रामजी, तनिक दिये मुस्काय ॥६॥

जब राम सिया ने आपस मे अवलोका, तब मगल ध्वनिया की चहु दिशि सब लोका।
विटपो ने और लताओ ने हर्षा कर, श्रद्धाजलि अर्पित कीन्ह पुष्प वर्षा कर ॥
भ्रमरो ने मीठे स्वागत गीत सुनाए, शीतल सुगंध वायु ने वाद्य बजाए।
श्रीराम लखन कर भ्रमण मुदित मन आए, ऋषि विश्वामित्र को सब वृतात बताए ॥

करते करते बात जब, बीती सारी रात ।
गुरु सेवा में हो गया, मंगल उदित प्रभात ॥७॥

कर सध्या तर्पण हवन अर्चना दाना, गौ ब्राह्मण गुरु पूजन कर राम महाना ।
पाकर आमंत्रण धनुषयज्ञ मे धाए, जह विविध देश के शूर श्रेष्ठ नृप आए ॥
जब पहु चे ऋषि के साथ यज्ञ मे रामा, पट भूषण भूषित मनहर ललित ललामा ।
सब ही आकर्षित दृष्टि राम पर डाली, पहुंचे स्वागत मे जनक राज ले थाली ॥

मुनिवर विश्वामित्रजी, पा आदर सत्कार ।
राम लखन के सग मे, बैठे मंच मझार ॥८॥

शोभा वर्णी ना जाय यज्ञशाला की, श्री विश्वामित्र श्री राम लखन लाला की ।
इक इक से अच्छे हुए इकट्ठे राजा, इक इक से सुन्दर सजे हुए थे साजा ॥
पर सबसे उत्तम रघुवर लखन सुहाए, थे जितने नैना सभी उधर खिंच आए ।
सब राजा तारे चाद सूर्य रघुराई, करने आपस मे चर्चा लोग लुगाई ॥

इतने ही में आ गई, सीता सखियन साथ ।
शतानन्द औ जनक को, प्रथम झुकाया माथ ॥९॥

सब सखी सहेली हिल मिल मगल गाए, अष्टाशत द्वारो पर नौबत घरराए ।
बज रहे शंख भेरी वीणा सब बाजे, ढोलक मृदंग डफ ढोल नगारे गाजे ॥
लग रही भीड थी धनुष यज्ञ मे भारी, शिव धनुष मध्य मे शोभित था शुभकारी ।
श्री जनक अमात्यो सहित धनुष ढिग आए, कर धूप दीप पूजा फिर फूल चढाए ॥

एक एक आकर नृपति सब, हार गए कर जोर।
बाल मात्र धनु ना हिला, चढ़े कहां से डोर ॥१०॥

तब संबोधित कर बोले नृप मिथिलेशा, बस रहा आज का दिन केवल अवशेषा।
जो धनु की प्रत्यचा ना चढ पावेगो, तो सीता बिन ब्याही ही रह जावेगी।
मैं जान गया पृथ्वी पर रहे न वीरा, कह इतना राजा हो गए खिन्न अधीरा।
तब लक्ष्मण ने रघुपति की ओर निहारा, हो रहे नेत्र उनके थे लाल अंगारा॥

बोले विश्वामित्र झट, देख राम की ओर।
उठा धनुष को वीरवर, शीघ्र चढादो डोर ॥११॥

जब चले राम श्री गुरु की आज्ञा पाई, गज गति से धीरे धीरे पाव बढाई।
तब रग भूमि मे मच गयी हलचल भारी, गौरी को सुमरन लगी सिया सुकुमारी॥
पहुंचे समीप जब धनु के राम अनूपा, काना फूसी तब करन लगे भटभूपा।
रावण सहस्रबाहु जिससे गए हारा, उस धनु को उठा सकेगा क्या सुकुमारा॥

कर प्रणाम श्री राम ने, की परिक्रमा चार।
तान धनुष को तोड़ कर, दिया भूमि पर डार ॥१२॥

कडकी बिजली कापे धरणी आकाशा, हो गयी जनक सीता की पूरी आशा।
श्री विश्वामित्र श्री लखनलाल हर्षाए, देवो ने नभ से पत्र पुष्प बरसाये॥
गा उठी नारिया मंगलमय मधु गीता, छिड गया विविध वाद्यो पर स्वर संगीता।
जब पहिनाई सीता ने आ वर माला, जय सियाराम से गूंज गई रंग शाला॥

इतने ही में आ गए, परशुराम विकराल।
चमक रहा था तेज से, भव्य भस्म युत भाल ॥१३॥

किसने तोडा यह धनुष मुझे बतलाओ, उस नर को झटपट मेरे सन्मुख लाओ।
लख कर क्रोधित मुद्रा सब नृप घबराए, पर छाती ताने लखनलाल जी आए॥
कीन्हा कोमल वाणी से राम निवेदन, हो गया प्रभु मुझसे ही यह तो बचपन।
बचपन ना तुमने जान बूझ कर तोडा, लो मेरे धनु को खेंचो तो तुम थोडा॥

ले धनु को श्रीराम ने, दीन्हा बाण चढाय।
गए पराक्रम देखकर, परशुराम चकराय ॥१४॥

फिर बाण हवा मे छोड राम ने दीन्हा, श्री परशुराम का सारा तप हर लीन्हा।
श्री राम रूप मे देख महा जगदीशा, श्री परशुराम चल दिए झुका कर शीशा॥
तब पुनि पहिले की भाति शाति सुख छाए, सीता की सखियो ने मिल मगल गाए।
हो गया जनक राजा का जब पूरा प्रण, तब अवधराज को भेजा व्याह निमंत्रण॥

जनक राज का अवध में, पहुंचा जब संदेश।
ले बरात चतुरंगिणी, आ पहुंचे अवधेश॥१५॥

पहुंचे स्वागत मे जनक राज अगवाई, ले पत्र पुष्प फल मेवा दूध मिठाई।
हाथी घोडे रथ ऊंट पालकी सारे, सोने चादी के गहनो से शृ गारे॥
मिल दशरथजी से जनक कहे मधु वाचा, अति नम्र निवेदित प्रेम सुधा रस राचा।
मैं अधम अकिंचन आप बडे रघु राजा, मेरे सर की है प्रभु चरणो मे लाजा॥

सुन विदेह के वर वचन, गए भूप सकुचाय ।
प्रेम सहित मिथिलेश को, छाती लीन्ह लगाय ॥१६॥

स्वागत मे तोपे छुटी नगारे गाजे, पुष्पो की वर्षा हुई बज उठे बाजे ।
श्रीराम लखन पितु गुरु को शीश झुकाए, फिर भरत शत्रुहन को निज गले लगाए ॥
ऋषि विश्वामित्र से गुरुवर मिले वशिष्ठा, छू चरण ऋषि के दशरथ कीन्ह प्रतिष्ठा ।
मिलते जुलते सब जनवासे मे आए, लख जनकपुरी को सबके नेत्र लुभाये ॥

रामचंद्र की जिस समय, सज कर चली बरात ।
जगह जगह होने लगी, फूलो की बरसात ॥१७॥

हो गयी भीर चौराहो पर अति भारी, देखन बरात को उमड पडे नर नारी ।
श्रीराम लखन अरु भरत शत्रुहन भाई, चारो दुल्हो की शोभा कही न जाई ॥
सज गए सकल नगरी के सदन सुरगे, अनुपम आभा से सुन्दर रग बिरगे ।
पहु ची बरात जा जनक राज प्रासादा, हो रहे गीत संगीत नाद आल्हादा ॥

लिए फूल अरु आरती, सजी सहस्रों नार ।
स्वागत करने राम का, खडी जनक के द्वार ॥१८॥

कर पुष्पाजलि अर्पित आरतिया कीन्ही, सरसो अक्षत को वार बलैया लीन्ही ।
चारो दुल्हो की कर सेवा सत्कारा, मडप मे वेदी पर लाकर बैठारा ॥
कर नादी मुख का श्राद्ध जनकजी आए, दोनो पक्षो ने पीढी नाम सुनाये ।
कर गणपति देवो की पूजा विधि नाना, श्री जनक नृपति ने कीन्हा कन्या दाना ॥

दशरथजी ने किया तब, विप्रों का सन्मान।
स्वर्ण सीग से युक्त दी, चार लाख गौदान ॥१६॥

हीरे पन्ने माणिक मोती बरसाये, वदी चारण चाकर भिक्षुक हर्षाए।
जब लिया राम सीता आदिक ने फेरा, तब किया जनकजी ने रत्नो का ढेरा ॥
जो जितना जी चाहे उतना ले जाए, लख कर कुवेर ललचाए और लजाए ॥
हो गया सफल जब वैदिक रीति विवाहा, तब दिया सुनाई धन्य धन्य अरु वाह वाह

देव ऋषि ब्राह्मण सभी, पा अतुल्य धन मान।
करन लगे श्री जनक औ, दशरथ का गुण गान ॥२०॥

श्री रामचन्द्र के साथ सियाजी सोहे, श्री भरतलाल के साथ माडवी मोहे।
श्री लखनलाल के साथ उर्मिला राजे, श्री शत्रुहन के सह श्रुतकीर्त्ति साजे।
वर वधु सबके चरणो मे नाए शीशा, वर वधुओ को सबने दी शुभ आशीशा।
कर तिलक राम के जनक राय महिपाला, जो कुछ था अपने पास सभी दे डाला ॥

नित प्रति जीमनवार दी, छप्पन भोग बनाय।
भोजन कर कर बराती, गए अतीव अघाय ॥२१॥

श्रीजनकपुरी से हुई बरात विदाई, चलते चलते जब निकट अयोध्या आई।
तब दौड़े सबसे आगे चारण नाई, दी जाकर कौशल्या को सुखद बधाई ॥
थी अवधपुरी मे अनुपम दीप सजाई, जिसकी शोभा लख अमरापुरी लजाई।
गा रही नारिया घर-घर मगल गीता, पहुंचे अपने घर रामचन्द्र ले सीता ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ४

अयोध्या काण्ड

सत्य प्रेम अरु न्याय से, शासन का सब काम।
नृप दशरथ के सग मे, करन लगे श्री राम ॥१॥

श्री रामचन्द्र की होने लगी प्रशसा, सब कहन लगे ये है रघुकुल अवतमा।
वे तन मन धन से सच्चे थे जन सेवक, दुखियारो की जीवन नैया के खेवक ॥
थे सदाचार सपन्न प्रजा के प्रेमी, प्रतिभाशाली अनुपम उदार दृढ नेमी।
समदर्शी शिक्षित शुद्ध हृदय के ज्ञानी, प्रिय भाषी विनयी नम्र दयामय दानी ॥

घर घर मे श्रीराम का, नाम हो गया व्याप्त।
परम पुण्य से अवध ने, किया राम को प्राप्त ॥२॥

हो गये राम भारत मे जन प्रिय प्यारे, करने आपस मे राम राम मिल सारे।
श्री राम नाम हो गई जडी अरु बूटी, श्री राम नाम हो गई जन्म की घूटी ॥
जिसको देखो सब राम हि राम उचारे, हो गए राम सबकी आखो के तारे।
हो गई राम की गाव गाव मे ख्याती, श्री राम नाम का सब जनता गुण गाती ॥

सुन कर महिमा राम की, नृप ने किया विवेक।
हो जाना अब ठीक है, राम राज्य अभिषेक ॥३॥

तब गुरु वशिष्ठ को मन की बात बताई, पचो के सग मे सारी प्रजा बुलाई।
हो राम राज्य का जनता को अब दर्शन, नृप की बातो का सब ने किया समर्थन ॥
इससे अच्छी क्या और बात होवेगी, पा राम राज्य जनता सुख से सोवेगी।
ले सब की सम्मति फिर डोडी पिटवाई, मडल मडल मे पत्री दी भिजवाई ॥

राम राज्य होगा तुरत, सुनकर यह सवाद ।
अवध पुरी मे छागया, घर घर सुख आल्हाद ।।४।।

सब करन लगे नर नारी मिल जुल बाते, यू बीत गए कितने ही दिन अरु राते ।
वह दिन भी कल ही उदय होन आया है, जिसको वशिष्ठ जी ने शुभ बतलाया है ।।
निकलेगी राम प्रभु की कल असवारी, सिहासन सजने लगा हुई तैयारी ।
सज गये अवध के गली गली चौराहे, सब देख देख कर अचरज करे सराहे ।।

स्वागत करने राम का, उमड पडा सब देश ।
दूर दूर से आ गये, ले उपहार विशेष ।।५।।

अभिषेक राम का होगा महा महाना, लग रहा सभी को उत्सव बडा सुहाना ।
सोने चादी के रत्न जडित बहु गहने, सब रग रंगीले कपडे लत्ते पहिने ।।
आबाल वृद्ध झाकी देखन को आये, तन तैल तिलक अरु गध सुगध लगाए ।
सब के हाथो मे श्रीफल औ मिष्ठान्ना, माला केसर चन्दन अक्षत फल नाना ।।

सजे पताका कलश से, परकोटा घर द्वार ।
पंच पत्र अरु पुष्प की, झूले बन्दनवार ।।६।।

कदली फल के खम्भो की छटा निराली, दिन मे दीपक जगमगे हुई दीवाली ।
हो गई भीड अन देखी राज पथो पर, चौखट टारी छज्जो पर और छतो पर ।।
श्री रामचन्द्र के दर्शन के अभिलाषी, हो गए इकट्ठे जगह जगह पुर वासी ।
बज रहे अनेको बाजे मधुर सुरीले, गा रही नारिया मगल गीत रसीले ।।

राज भवन में हो रहा. उत्सव आज महान ।
राम राज्य अभिषेक का, विधिवत वेद विधान ॥७॥

गुरुवर वशिष्ठ अरु वाम देव जी आए, पूजा की सब सेवक सामग्री लाए ।
घृत मधु दधि दुग्ध सुमन औषधिया सारी, मोदक मेवे एला ताँबूल सुपारी ॥
ध्वज छत्र चमर अरु धेनु वृषभ मंगवाए, शुभ शांति पाठ के लिए विप्र बुलवाए ।
हो रहे असीम सुखी सब उत्सव लीना, कर रहे अनेको ब्राह्मण भोजन दीना ॥

देख दृश्य सब मंथरा, गई केकई पास ।
गरम साँस को छोडती, बन कर दीन उदास ॥८॥

रानी बोली क्यो सुख मे आज उदासी, छाई तेरे मुख पर बतला दे दासी ।
कारण मत पूछो मुझ से हे श्री रानी, कहते कहते नयनो से ढलका पानी ॥
फिर रोती रोती हिचकी भरती बोली, वाणी अनजानी अमृत मे विष घोली ।
जो राम राज्य कल ही होने वाला है, उसने मुझ पर दुख का पहाड़ डाला है ॥

चुप रह रानी ने कहा, सोच समझ कर बोल ।
राम राज्य प्रतिकूल तू, आगे मुख मत खोल ॥९॥

तब सहम मंथरा फिर से बात बनाई, चतुराई से फिर रानी के ढिग आई ।
बोली मे कहती बात आपके हित की, श्री भरत लाल के सर्व सुखो की नित की ॥
यदि नही मानती जाती हूं यह लो मै, अब कभी नही आऊंगी इन महलो मे ।
जाती का रानी ने झट आचल पकडा, अपने कर मे दासी के कर को जकड़ा ॥

रानी बोली मंथरे, राम भरत है एक।
वहां भरत का राज्य है, जहां राम अभिषेक ॥१०॥

तू झूठी चिन्ता करती दासी मन मे, मत भेद समझ तू भरत राम के तन मे।
ले पुरस्कार मैं देती तुझ को भूषण, मत राम राज्य मे देख तनिक तू दूषण ॥
हो राम राज्य कल यह शुभ हर्ष मनावो, सब मिलजुलकर महलो मे मगल गावो।
सुन कैकेई के वचन मथरा बोली, फैलाकर अपने आचल को कर झोली ॥

भरत भलाई के लिए, मांग रही मै भीख।
सुख पावोगी जन्म भर, मानो मेरी सीख ॥११॥

श्री रामचन्द्र जब राजा बन जाएंगे, तब भारत लाल जी भीख माग खाएंगे।
फिर राम पुत्र हो जाएंगे अधिकारी, अरु भरत लाल के होंगे पुत्र भिखारी ॥
तुम बन जावोगी कौशल्या की चेरी, तब याद करोगी सारी बातें मेरी।
हो जावेगा कल ही यह सब परिवर्तन, छिन जावेगा तेरा सब कुछ तन मन धन ॥

सुन कर बातें स्वार्थ को, गई बुद्धि बौराय।
रानी ने झट से उसे, लीन्ही गले लगाय ॥१२॥

कर गुप्त बात जा कोप भवन मे सोई, तज वस्त्राभूषण श्री शृंगार रसोई।
जब रात पडी तब नृप दशरथजी आए, लख कोप भवन मे कैकई को घबराए ॥
किसने अपराध किया है रानी बोलो, मेरे सर की सौगन्ध है अंखिया खोलो।
जो बात हो सच्चे मन की मुझे बतावो, मैं करूं वही जो कुछ भी तुम जतलावो ॥

बार बार सुन नृप वचन, रानी उठी रिसाय।
पूर्ण करो ना वचन तो, मरू हलाहल खाय ॥१३॥

दो वर देने जो बाकी थे सो साजन, वे देने होगे इसी समय हे राजन।
दो क्या सौ वर भी देता हूं हे रानी, मागो मुह से जितने चाहो मन भानी ॥
कर सत्य प्रतिज्ञा कहता हु सुर साखी, जो मागोगी सो दूंगा रखू न बाकी।
कर वचनबद्ध रानी ने वचन उचारे, अप्रिय कठोर तीखे कडुवे अति खारे ॥

सौ ना दो ही मागती, सुनो लगा कर ध्यान।
इसी समय बस दीजिए, नृपवर दो वरदान ॥१४॥

दो राज भरत को पहला वर यह भाषा, दूजा वर चौदह वर्ष राम वनवासा।
सुन वज्र वाक्य दशरथ महिपाला कापे, घूमा मस्तक अरु जोर जोर से हाफे ॥
फिर गिरे धरणि पर मूर्च्छित हो तत्काला, औ रोम रोम से फूट पडी दुख ज्वाला।
हे राम राम हे राम राम तब बोले, नृप छोड छोड निश्वास नयन अधखोले ॥

प्रात होत ही शीघ्र से, फैल गई सब बात।
होन लगी प्रति आंख से, आंसू की बरसात ॥१५॥

रुध गये सभी के गले बोल नही आवे, सब की आखो से आसू झर झर जावे।
हो गई अवध की सारी प्रजा दुखारी, हो गया रंग मे भग अमंगल कारी ॥
रह गया अवध जनता का स्वप्न अधूरा, संकल्प राज दशरथ का हुआ न पूरा।
छा गई घटाए काली राज महल मे, आया अंधड अनजाना चहल पहल मे ॥

टूट टूट पड़ने लगी, कट कट बन्दनवार ।
तडक तड़क गिरने लगे, तोरण खम्भे द्वार ॥१६॥

फट गई पताका ध्वजा धूल मे लाजे, सब बन्द हो गए बजने वाले बाजे ।
छा गया पुरी मे क्षोभ भयकर भारी, रह गई राम राज्याभिषेक तैयारी ॥
हो गए इकट्ठे दशरथ के ढिग सारे, मूर्छित दशरथ जी राम हि राम पुकारे ।
श्री राम पिता के चरण समीप नियोगी, वन गमन करन तत्पर थे वीर वियोगी ॥

श्री दशरथ के चरण पर, रखा राम ने माथ ।
राम शीश पर धर दिया, श्री दशरथ ने हाथ ॥१७॥

गुरुवर वशिष्ठ मत्री सुमत्र अकुलाए, केकई को बहु विधि धर्म मर्म समझाए ।
सिद्धार्थ सुमित्रा कौशल्या लक्ष्मण ने, परिवर्तन करने कहा नृपति को प्रण मे ॥
धीरे से दशरथ ने मतव्य उचारा, रघुवशी को प्राणो से प्रण है प्यारा ।
सुन कर दशरथ की दृढ प्रतिज्ञा सारे, रह गए स्तब्ध सब विधि के आगे हारे ॥

सब की वाणी मौन थी, थे सब क्षुब्ध उदास ।
टूक टूक हो गिर गई, कौशल्या की आश ॥१८॥

बह पडी सबो की आखो से जल धारा, बिछुडन चाहत है दशरथ प्राणाधारा ।
छट पटा उठे दशरथ पंछी की नाई, मुख मडल पर पड गई विरह की झाई ॥
वन सग राम के सिया लखन जाने को, हो गए उपस्थित त्याग राज बाने को ।
पहिने वलकल के वस्त्र बने बैरागी, वन गमन करन चाहत हैं तीनो त्यागी ॥

राम लखन अरु जानकी, किए तापसी भेष ।
नृप आज्ञा पा चल दिए, छोड कुटुम्ब स्वदेश ।।१६।।

नर श्रेष्ठ राम निकसे जब रनवासो से, हे राम राम निकला सब की स्वासो से।
छा गया नगर मे चारो ओर विशादा, मिट गया राम राज्याभिषेक आल्हादा ।।
सब लगे केकई के ऊपर रिसियाने, सब लगे नृपति दशरथ को देने ताने ।
हो गई विरह से व्याकुल जनता सारी, सब रोन लगे आबाल वृद्ध नर नारी ।।

मात पिता आदेश का, पालन करने राम ।
छोड चले निज गेह को, छोड़ चले निज ग्राम ।।२०।।

तब दिया अवध मे हाहाकार सुनाई, क्रदन की ध्वनिया दसो दिशो से आई ।
अरु छोड दिया सब ही ने भोजन पानी, आई विपदा अनहोनी औ अनजानी ।।
अरु छोड दिए चिड़ियो ने चुगने दाने, पक्षी करुणा से लगे घोर चिल्लाने ।
पशुओ ने दुख से छोडा चरना चारा, छा गया अवध के घर घर मे अ धियारा ।।

आगे आगे रामजी, पीछे सीता मात ।
उनके पीछे लखन जी, छोड़ अयोध्या जात ।।२१।।

तब पत्र पुष्प औ लता वृक्ष मुरझाए, वापी तडाग कूपो के जल अकुलाए ।
मयुरो ने छोडा नृत्य मृगो ने खाना, कोकिल ने छोड़ा गीत भ्रमर ने गाना ।।
जिसको देखो सब राम विरह मे व्याकुल, कर रहे अश्रु का पात व्यथित हो आकुल ।
जड़ चेतन सब को आ गई व्यथा रुलाई, श्री राम विरह मे आसू झड़ी लगाई ।।

गिरीश रामायण

अध्याय ५

अयोध्या काण्ड

●

छोड़ अयोध्या स्वजन को, चले गए जब राम ।
राम राम रटने लगे, सब प्राणी अविराम ॥१॥

हो गई राम के बिना अयोध्या सूनी, श्री सिया लखन के जाने से अरु दूनी ।
दशरथ कौशल्या और सुमित्रा सारे, उर्मिला दास दासी सब रो रो हारे ॥
श्री राम सिया लक्ष्मण रथ पर आरोही, चल दिए जिस तरह जाते छोड बटोही ।
जब तक देती थी रथ की रज दिखलाई, तब तक सब ही ने दृष्टि उधर लगाई ॥

बिना राम के छा गया, अवधपुरी में शोक ।
सब ही व्याकुल हो गए, पशु पक्षी अरु लोक ॥२॥

सब छोड़ छोड कर नर नारी घर द्वारे, श्री राम सिया के पीछे दौड़े सारे ।
जंगल जंगल पथ पथ जा जा कर हेरा, ढूंढत ढूढत पा रथ को जा जा घेरा ॥
वन मे जाने से रघुपति को फिर टोका, सुमन्त्र सारथी ने भी रथ को रोका ।
जनता के प्रतिनिधि आगे आकर बोले, कर जोड़ शीश को झुका वचन दुख घोले ॥

हम चाहत है आपको, लौट चलो हे राम ।
तुम राजा हम है प्रजा, नही अन्य का काम ॥३॥

हमरी आशा पर प्रभु पहाड़ मत डालो, हम है अनाथ हे नाथ दयालु सम्भालो ।
जिस तरह तडप मर जाती जल बिन मीना, तैसे मर जावेगे हम आप बिहीना ॥
श्री अवधपुरी की निर्मल जनता भोली, करुणा पूरित स्वर से रो रो कर बोली ।
हम दुखियारो को मत भूलो बिसराओ, हे राम अधर मे छोड़ हमे मत जाओ ॥

असमंजस में पड़ गए, घिरे प्रजा से राम ।
रथ से नीचे उतर कर, चलन लगे सुख धाम ।।४।।

चलते चलते पैदल प्रभु वचन उचारे, सुख शान्ति प्रदाता अनुपम हितकर प्यारे ।
तुम लौट-लौट अपने-अपने घर जाओ, गुरु मात-पिता सब को जा धीर बंधाओ ।।
मैं विता वर्ष चौदह पुनि घर आऊंगा, कर आप सबो के दर्शन सुख पाऊंगा ।
चलते चलते जब तमसा दीन्ह दिखाई, घर जाने को फिर जनता को समझाई ।।

बोली सारी प्रजा तब, दृढ़ निष्ठा के साथ ।
जहां चरण है आपके, वहां हमारे माथ ।।५।।

ब्राह्मण क्षत्री औ वैश्य शूद्र जन सारे, ब्रह्मचारी गृही त्यागी हरिजन प्यारे ।
दे घेरा प्रभु के तमसा तीर किनारे, चरणो मे पड़ कर व्याकुल वचन उचारे ।।
हे राम आप को आगे जान न देंगे, यदि जावोगे तो हम भी साथ चलेंगे ।
हम भी वन मे रह कन्द मूल खावेंगे, पा दर्शन औ उपदेश मुक्ति पावेंगे ।।

करने संचय धर्म का, मेटन को त्रय ताप ।
संग रहेगे आप के, जहां रहेगे आप ।।६।।

सुन वचन प्रजा के रघुपति राघव रामा, तमसा के तट पर कीन्ह् विवश विश्रामा ।
दिन वीता सध्या वीत रात हो आई, समझान लगे जनता को पुनि रघुराई ।।
मेरे जैसा तुम भरत लाल को जानो, श्रद्धा भक्ति से उन को राजा मानो ।
सुन वचन राम के जनता हुई न राजी, बोली रघुनन्दन से होगा यह ना जी ।।

बिना आपके राम जी, चल न सकेगा राज ।
जनता पीड़ित होयगी, होगे अशुभ अकाज ॥७॥

बिन राम आपके बल ना हो बहुमत मे, अराजकता छा जावेगी भारत मे ।
बिन राम आपके रक्षा कौन करेगा, जो चाहेगा जनता का द्रव्य हरेगा ॥
बिन राम आपके होगी लूट खसौटी, आ गई देश की दशा अभागी खोटी ।
बिन राम आपके होगी प्रजा दुखारी, बल बुद्धि विद्या धर्म नष्ट कर सारी ॥

रह न सकेगा स्थिर कभी, जनता का जनतन्त्र ।
राम राज्य बिन होयगा, भारत नत परतंत्र ॥८॥

परतन्त्र राष्ट्र का जीवन नरक समाना, है पराधीनता सकल दुखो की खाना ।
परतन्त्र बराबर पाप न जग मे कोई, जो राष्ट्र हुआ परतन्त्र मिट गया सोई ॥
दासता चरम सीमा है अधःपतन की, मानव जीवन मणि से अनमोल रतन की ।
हे राम आपसे अन्तिम है यह कहना, हम वहीं रहेंगे जहां आपका रहना ॥

कुछ पथ के श्रम से थके, कुछ माया बस होय ।
करते बातें राम से, गए सभी जन सोय ॥९॥

तब चढ कर रथ पर राम सिया निर्मोही, चल दिए प्रजा को छोड़ निशा मे सोई ।
जब जगी प्रजा तब दिए न राम दिखाई, सब रटन लगे हे राम राम रघुराई ॥
श्री राम सिया लक्ष्मण औ चतुर सुमंता, जा पहुचे झट पट शृङ्गबेर पुर पंथा ।
पुर के निषाद राजा ने जब यह जाना, आए हैं रघुकुल कमल विकासक भाना ॥

दर्शन करने राम का, आ पहुंचे सब लोग ।
ग्रामिण जनता को मिला, सुन्दर सुखद सुयोग ॥१०॥

श्री राम सिया को देख ग्राम्य नर नारी, हो गए मुग्ध लख मनहर जोडी प्यारी ।
खा कन्द मूल फल रात किया विश्रामा, फिर करन लगे प्रस्थान वहा से रामा ॥
वट दुग्ध मंगा वालो की जटा बनाई, सब रोन लगे गावो के लोग लुगाई ।
बोले सुमंत से राम बहुत सकुचाए, मुख मण्डल नीचे किए अधर अलसाए ॥

हे सुमंत्र जो आप अब, जाय अयोध्या लौट ।
सुन कर लगी सुमंत्र के, बिजली की सी चोट ॥११॥

क्या कहा नाथ क्या कहा नाथ सेवक से, थी कभी न आशा ऐसी प्रभु के मुख से ।
मै छोड़ आपको वन मे कैसे जाऊ, कौशल्या मा को मुख कैसे दिखलाऊं ॥
श्री दशरथ जी से जा कर के क्या बोलूं, जनता के सम्मुख कैसे मुख को खोलूं ।
ऐसी कठोर आज्ञा मुझ को मत दीजे, हे नाथ दया कर दास विनय सुन लीजे ॥

चलना होगा आपको, लौट अयोध्या धाम ।
मात पिता गुरु प्रजा का, हित करने हे राम ॥१२॥

बिन राम आपके सूनी पड़ी अयोध्या, हे राम आपके लिए नही यह योग्या ।
गत रात प्रजा को राह डगर मे सोती, आ गए छोड हे करुणा सागर रोती ॥
क्या यही भक्त वत्सलता है प्रभु बोलो, कर कृपा नाथ मम मन की ग्रन्थी खोलो ।
मेरी लघुमति मे जो कुछ बात समाई, कर क्षमा नाथ मुझ को दीजे समझाई ॥

हे सुमंत्र सुन लीजिए, जग माया का नाम।
इस में करना चाहिए, स्नेह साथ निष्काम ॥१३॥

ना यहा किसी का साथी कोई होता, वैसा फल पाता है जैसा जो बोता।
हैं पूर्व जन्म के पाप पुण्य ही साथी, हैं धर्म कर्म ही सगे कुटुंबी नाती॥
ना प्रजा किसी की ना कोई राजा रंका, यह भूले भटके मानव मन की शका।
जा कर घर सब को यह सदेशा दीजे, दु:ख सुख दोनों मे हरि का सुमरन कीजे॥

पा आज्ञा रघुनाथ की, बरबस सोच विचार।
राम सिया औ लखन से, मिल कर बारंबार ॥१४॥

लौटे सुमंत्र बिन राम सिया लक्ष्मण के, फट गए हृदय तब रज रज के कण कण के।
चल सके न घोड़े पाव हो गए भारी, हिन हिन को भूले करन लगे किलकारी॥
जिसने देखा रथ खाली सो ही रोया, रोते रोते पुनि पुनि खाली रथ जोया।
हा चले गए हा चले गए रघुराई, करुणा पूरित ध्वनिया चहु दिशि से आई॥

जब पहुंचे अवधेश के, कानों में ये शब्द।
पथराए से हो गए, निश्चल औ निस्तब्ध ॥१५॥

हिलना डुलना सब बन्द हो गया तन का, दुख उमड़ पड़ा आखो से सारा मन का।
वह निकली धारा भीग गई सब शैया, डगमगा गई दशरथ की जीवन नैया॥
जब सुना राम का अवधपुरी ना आना, तब नृप दशरथ का जीव बहुत अकुलाना।
इक इक घटनाएं आखो मे आ आ कर, बीते जीवन के चित्र रखे ला ला कर॥

श्रवण कथा भी आ गई, नृप दशरथ को याद ।
हाय उसी अभिशाप का, है यह अन्त विषाद ॥१६॥

मृग के धोखे मे वाण श्रवण के मारा, खा बाण श्रवण तत्काल ही स्वर्ग सिधारा ।
मरते मरते हा मात पिता वह बोला, पितृ भक्ति का अनुपम रत्न अमोला ॥
अन्धे बूढे मा बाप श्राप दे डारा, मरते मरते छोड़त छोडत ससारा ।
जिस तरह आज हम मरते पुत्र वियोगी, वस इसी तरह तुम्हरी मृत्यु भी होगी ॥

जब सुमंत्र के संग में, लौट न आए राम ।
घर घर में तब अवध के, मचा महा कुहराम ॥१७॥

कौशल्या माता हाय हाय कर रोई, विन बछडे के ज्यो गाय राभती कोई ।
दशरथ राजा के दुख का पार न पाया, हो गए स्वास तक बन्द छोड दी काया ॥
लक्ष्मण की माता और उर्मिला नारी, क्या करे कहा जावे दोनो दुखियारी ।
चेरी चाकर शासक सैनिक रखवारे, डूबे करुणा सागर के बीच मझारे ॥

उधर राम का वन गमन, इधर नृपति तनु त्याग ।
अवधपुरी की प्रजा का, हा ! कैसा दुर्भाग्य ॥१८॥

गुरुवर वसिष्ठ कोने मे जा कर रोए, सुमत्र सारथी फिरते खोए खोए ।
मच गया राज मदिर मे हाहाकारा, छिप गया सूर्य रघुवशी कर अन्धियारा ॥
हो गई रात दिन मे ही कारी कारी, हो गई अवध नगरी विरहिण बेचारी ।
हा राम राम दशरथ दशरथ सब रटते, एक एक दिन कोटि कोटि वर्ष सम कटते ॥

चार पुत्र होते हुए, एक पुत्र ना पास ।
कैसी विधि की कल्पना, कैसा विधि का'त्रास ॥१९॥

पहुंचा सारे भारत मे दुख संवादा। छा गया शोक सुनते ही हुआ विषादा ।
हो गए बन्द सब हाट बाट औ काजा, हो गए उदासी देश देश के राजा ॥
झुक गए सभी देशों के झण्डे नीचे, रो उठे सभी जन सर धुन आखें मींचे ।
मर गए राम के पिता सभी यूं बोले, राजेन्द्र शिरोमणि भारत रत्न अमोले ॥

उमड़ा सागर शोक का, पृथ्वी में चहुँ ओर ।
रुदन ध्वनि से विश्व में, बचा न कोई छोर ॥२०॥

क्या होना था क्या हुआ हाय हे रामा, क्यो हुआ इस तरह रघुकुल से विधि वामा ।
एक राम छोड़ घर चले गए वनवासा, दूजे दशरथ जी छोड़ गए तन स्वांसा ॥
तीजे घर पर ना भरत शत्रुहन भाई, चौथे ना कोई देवे धीरजताई ।
ज्ञानी वसिष्ठ आसू टपकावे रोवे, हरि की इच्छा जो होनी हो सो होवे ॥

गुरु वसिष्ठ बोले वचन, हरिइच्छा बलवान ।
पार न कोई पा सके, विधि का विकट विधान ॥२१॥

बिन हरि इच्छा के काम न होवे कोई, करके देखे कितना भी चाहे जोई ।
किसने जाना था राम जायंगे वन को, किसने सोचा नृप छोड़ जायंगे तन को ॥
किसने इस दिन का किया पूर्व अनुमाना, चाहा था किसने ऐसे दिन को लाना ।
फिर भी हरि की जो भी इच्छा हम पर है, स्वीकार हमे उनकी आज्ञा सर पर है ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ६

अयोध्या काण्ड

●

कर कर विदा सुमत को, लेकर गुह को साथ ।
गंगा तट जा कर कहा. केवट से रघुनाथ ॥१॥

भाई हमको है पार गंग के जाना, होगा हम को कर कृपा तुम्हे पहुचाना ।
बोला केवट कर जोड़ क्षमा दो रामा, होगा मुझसे हे राम नही यह कामा ॥
क्यो भाई क्या है बात मुझे बतलाओ, लाओ लाओ झट पट से नैया लाओ ।
ना ना ना ना ना क्षमा करो महाराजा, चलता है इससे सारे घर का काजा ॥

यही एक बस नाव है, मुझ गरीब के पास ।
मुझे नही है आपके, चरणों का विश्वास ॥२॥

हो जावे नौका की नारी छू जिससे, फिर मैं क्या करूँ कमाऊँ बोलो किसमे ।
मर जावे मेरे भूखे बच्चे नारी, आ जावे मुझ पर संकट विपदा भारी ॥
सुन कर केवट के वचन भावमय भोले, रघुनन्दन हंस कर मन्द मन्द पुनि बोले ।
नारी ना होगी भैया नाव तुम्हारी, मैं सच कहता हूं मानो बात हमारी ॥

ना मुझको विश्वास ना, श्री चरणों का राम ।
शिला अहिल्या हो गई, जाने सब जग धाम ॥३॥

पावो की मुझको प्रथम परीक्षा दे दो, केवट भैया जैसे चाहो तुम ले लो ।
रखो इस कठवे मे पावो को धोलूं, कठवा कठवा ही रहता है, क्या जोलूं ॥
हा ठीक बात है बोले श्री रघुराई, रखे पावो को कठवे मे ले जाई ।
धो कर पावो को पी चरणामृत केवट, ले गया गंग के पार नाव को खे झट ॥

उतर रामजी नाव से, देन लगे श्रम द्रव्य ।
पांव पकड़ मांझी भना, यह होवे क्षन्तव्य ॥४॥

मैंने सब कुछ पा लिया चरण छू देवा, देना है तो दो श्रद्धा भक्ति सेवा ।
दिन रात रटू श्री राम नाम जीवन मे, हे राम रमो मम रोम रोम मे तन मे ॥
कर कृपा राम सेवक को बस यह वर दो, मेरे जीवन को राम राम से भर दो ।
प्रभु पुलकित हो केवट को गले लगाया, नभ से देवो ने दिव्य सुमन बरसाया ॥

केवट से लेकर विदा, देखत उपवन ग्राम ।
भरद्वाज आश्रम निकट, पहुँच गए श्रीराम ॥५॥

त्रयवेणी तटवर्ती था पर्ण निकेतन, श्यामल वृक्षो के बीच विशाल तपोधन ।
गंगा जमुना के संगम पर सुखकारी, साकार स्वर्ग सा सुन्दर पातक हारी ॥
दर्शन ही जिसका अगणित पाप नशावे, विश्राम करें सो परम मोक्ष पद पावे ।
तहं करें यज्ञ शिष्यो के संग ऋषि राजा, जिसमे होते संपन्न सकल जग काजा ॥

भरद्वाज के चरण में, कीन्हा राम प्रणाम ।
आवभगत कर ऋषि ने, दीन्हा सुख विश्राम ॥६॥

खा कद मूल फल कर शीतल जल पाना, की भरद्वाज मे चर्चा राम सुजाना ।
रहने का कोई पुण्य स्थान बतलाओ, प्रभु रहो यही या चित्रकूट पर जाओ ॥
ना यहा नही हम चित्रकूट जावेंगे, जब आयंगे पुनि चरण दर्श पावेंगे ।
इस समय हमे कर कृपा विदा दे दीजे, स्वीकार दास के वचन आप कर लीजे ॥

भरद्वाज से ले विदा, मंगलमय भगवान ।
तीर्थराज प्रयाग में, कर श्रद्धा से स्नान ।।७।।

कर श्यामल वट का स्पर्श मुदित मन रामा, चलते चलते जा पहुँचे ऋषि मुनि धामा ।
श्री वाल्मीकि के आश्रम किया प्रवेशा, इससे उत्तम ना जग मे पुण्य प्रदेशा ।
जह रामायण का पाठ निरंतर होता, जो कोटि कोटि पातक पंको को धोता ।
श्री रामायण के गायन मे लवलीना, श्री वाल्मीकि जी अतिशय थे हरि लीना ।।

रामचन्द्र के चरित का, करते थे कवि गान ।
सिया लखन के संग में, पहुंच गये भगवान ।।८।।

स्वागत सहस्र हे राम लखन हे सीता, पथ जोवत जोवत सारा जीवन बीता ।
फिर की अनेक बातें ऋषिवर रघुराई, श्रम किया दूर पुनि प्रातः लीन विदाई ।।
जा पहु चे सारे चित्रकूट पर जाई, जहं लखनलाल ने मनहर कुटिर बनाई ।
श्री चित्रकूट की पर्णकुटी मे रामा, बन कर बनवासी रहन लगे घनश्यामा ।।

उधर अवध में पड़ा था, महाशोक दिन रात ।
नाना गृह से आ गये, भरत शत्रुहन भ्रात ।।९।।

सुन करुण कहानी गुरु वसिष्ठ के मुख से, दोनो भाई रो पड़े शोक से दुख से ।
श्री भरतलाल ने केकई को धिक्कारा, कुब्जा को शत्रुहन ने पकड़ पछाड़ा ।।
कौशल्या और सुमित्रा दोनो माता, बोली रहने दो क्रोध करो मत ताता ।
बहु समझाने से भरत शत्रुहन माने, फिर रो रो कर के लगे महा चिल्लाने ।।

सात दिनों से तैल में, पड़ा पिता का गात ।
राम गए घर छोड़ वन, हाय पिता हा भ्रात ॥१०॥

गुरुवर वसिष्ठ बोले छोड़ो संतापा, जो होना था सो हुआ वृथा है तापा।
यह पंचभूत का नश्वर पुतला जानो, कर्तव्य कर्म का ज्ञान बुद्धि मे ठानो ॥
शव दाह कर्म औ कर्मकाण्ड को कीजे, है धर्म पुत्र का यही ध्यान धर लीजे।
उठ बैठो होवो खडे शोक को त्यागो, तज घोर मोह की नींद भरत हे जागो ॥

जग छाया है स्वप्न की, झूठा सब जजाल ।
जो जनमे निश्चय मरे, आवे एक दिन काल ॥११॥

एक दिन सब को जाना होता है जग से, यह लोक छोड परलोक मृत्यु के मग से ।
देखो सुनलो इतिहास पुराण पुकारे, जो आए थे सो गये विश्व से सारे ॥
यह जग है केवल चिडिया रैंन वसेरा, उड जाना होता है जब होत सवेरा ।
शर्दी गर्मी वर्षा जो कुछ भी होवे, रुक सके न कोई चाहे जितना रोवे ॥

एक स्वास ना ले सके, कर न सके एक बात ।
ठहर सके ना एक पल, जब हंसा उड जात ॥१२॥

चाहे जितना कोई भी जोर लगावे, रुक सके न क्षण भी जब हंसा उड़ जावे ।
हो राजा चाहे रक स्वस्थ या रोगी, बालक जवान बुढ्ढा भोगी या योगी ॥
सम्राट चक्रवर्ती ज्योतिषी चिकित्सक, वैज्ञानिक ज्ञानी ध्यानी चतुर विशेपक ।
कर सके न कोई रोक थाम परिवर्तन, चाहे जितना होमे कोई तन मन धन ॥

शिक्षा मेरी मान लो, कहता शास्त्र विचार ।
पानी का सा बुदबुदा, यह शरीर संसार ॥१३॥

सागर मे लहरे आती जाती जैसे, जीवन की लहरें आती जाती तैसे।
झोका वायु का जैसे आता जाता, तैसे जीवन दीपक जलकर बुझ जाता ॥
यह जीवन नाटक है करता नट नर्तन, होता रहता है इसमे पट परिवर्तन।
यह मानव माटी की मूरत है मानो, इसमे जीवन एक कला समझलो जानो ॥

कलाकार की कला का, यह संपूर्ण विकास ।
इसमें दोनों दृश्य है, आशा और निराश ॥१४॥

यह जग गोरख धधा है भूलभुलैया, ना पिता किसी का ना कोई भैया मैया ।
यह तेरा मेरा मेरा तेरा कुछ ना, जो कुछ है प्रभु की लीला अपना तुच्छना ॥
लीलाधारी की लीला का यह खेला, जग दो दिन देखन का है केवल मेला ।
ना संगी साथी यहा किसी का कोई, सब अपने अपने पथ के पथिक बटोही ॥

चिन्ता सोच न कीजिए, लीजे हरि का नाम ।
यही एक बस सार है, और करन का काम ॥१५॥

इससे उत्तम ना काम जगत मे कोई,, करना है तो करले जो चाहे सोई।
हरि ही है सब ब्रह्माण्ड जगत के कर्ता, हरि ही है सब जीवो के भर्ता हर्ता ॥
है सूत्रधार हरि औ सब के संचालक, वे पिता हमारे हम सब उनके बालक।
हम कठपुतली की तरह डोर मे हिलते, उनमे से आते उनमे ही जा मिलते ॥

वही एक बस स्रोत है, मूल सच्चिदानन्द ।
हम सब उनके अंश है, सुनो भरत रघुनन्द ॥१६॥

सागर से ही बदली बन जल बरसाती, सागर मे ही गिर बूंद विलय हो जाती ।
पृथ्वी मे ही रज कण उड नभ मे जाता, पृथ्वी मे ही गिर कर के पुनि मिल जाता ॥
चलता सृष्टि का इसी भांति से क्रम है, ना अलग ईश से कोई केवल भ्रम है ।
भू जल नभ वायु तेज पंच ये भूता, है सर्जक और विसर्जक प्रभु के पूता ॥

एक आत्मा अमर है, और सभी है नाश ।
काया कच्ची काच सी, मृग मरीचिका प्यास ॥१७॥

अब छोड़ शोक को कर्मकाण्ड को कीजे, जो होनी होती सब चिन्ता तज दीजे ।
सुन गुरु वसिष्ठ की ज्ञान गिरा दोउ भाई, तज मोह शोक को की शव की शुचिताई ॥
गंगा जल से नृप शव को स्नान कराया, गोपी चन्दन से चर्चित करदी काया ।
फिर नाना वस्त्राभूषण नव पहिनाए, अर्थी के हीरे पन्ने रत्न सजाए ॥

शव के कीन्ह परिक्रमा, दीन्ह पिण्ड जल दान ।
राम नाम ही सत्य है, बोल चले शमसान ॥१८॥

हरि का कीर्तन करते लाखो नर नारी, पुष्पो को बरसातें उछाह से भारी ।
गाजे बाजे के साथ पालकी जावे, सोना चादी वस्त्राभूषण बरसावे ॥
चल रहे दण्डवत करते होले होले, जय महाराज दशरथ की सारे बोले ।
श्री भरत शत्रुहन दोउ भाई बड भागे, कंधो पर अर्थी धरे चल रहे आगे ॥

एक एक पद पा रहे, कोटि यज्ञ का धर्म ।
उदय हुए पिछले कोई, किए हुए सत्कर्म ॥१६॥

पहुंचे बैंकुठी लेकर मरघट जाई, शुचि स्थान देख गोमय की कीन्ह लिपाई ।
चंदन पीपल तुलसी की चिता चिनाई, श्रीफल कपूर गुग्गुल संयुक्त बनाई ॥
नृप के शव को स्थापित कर दिया चिता पर, फिर बोले सब मिल महादेव जय हर हर।
ऋषि ऋत्विज वैदिक विधि से कर जप हवना, कर दीन्हा गुंजित सामगान त्रयभुवना ॥

वेद सनातन शास्त्र की, पद्धति के अनुसार ।
आग लगा कर चिता में, कीन्हां हाहाकार ॥२०॥

सुन आर्तनाद कापे धरणी आकाशा, छागई सबो मे करुणा घोर निराशा ।
हिल गया विश्व का हृदय दु:ख के मारे, हो गये चिता मे भस्म प्रजा के प्यारे ॥
कंचन काया हो गयी राख की ढेरी, ना लगी तनिक सी भी क्षण पल की देरी ।
कर दाह कर्म सम्पन्न सभी जन धाये, सब मौन उदासी सरयू तट पर आये ॥

दीन्ह जलांजलि स्नान कर, नृप दशरथ को लोग ।
बोले सब था नृपति से, इतना ही संयोग ॥२१॥

अस्थीसंचय दशगात्र श्राद्ध फिर कीन्हा, नारायणबलि सपिंडी श्राद्ध कर दीन्हा ।
शैया गौ भूमि स्वर्ण वृषभ सब दाना, दीन्हा विप्रो को सब जग का सामाना ॥
कर ब्रह्म भोज अनगिनत दक्षिणा दीन्ही, रघुकुल सुयोग्य संपूर्ण रीति कर दीन्ही ।
फिर भरत शत्रुहन ने मिल मन मे ठाना, बन राम लखन सीता से मिलने जाना ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ७

अयोध्या काण्ड

●

गुरु वसिष्ठ मंत्री प्रजा, प्रमुख अवध के लोग।
राज सभा में जुड़े सब, पा कर एक दिन योग ॥ १ ॥

नृप के वर पर कर कर विमर्श सब जन ने, भरताभिषेक निश्चित कर दीन्ह सबन ने।
बोले वसिष्ठ जी विस्तृत वचन विचारी, श्री भरतलाल से कर कर सब तैयारी ॥
बैठो शुभ सिंहासन पर तिलक कराओ, हे भरत अयोध्या पति सम्राट कहाओ।
हम सब की इच्छा औ आशीश यही है, रक्षित हो तुम से भारत प्रजा मही है ॥

बजे दुंदुभि शंख औ, नाना वाद्य विशेष।
तुमुल नाद गुंजित हुआ, बढा भरत तन क्लेश ॥ २ ॥

मैं राजा नही बनूंगा महानुभावो, ये बजने वाले बाजे बंद करावो।
इस राज्यश्री का मै ना हूं अधिकारी, श्री भरतलालजी बोले धर्म विचारी ॥
बोले वशिष्ठजी वेद धर्म के ज्ञाता, मत शंका करो तनिक मन मे हे ताता।
राजा दशरथ औ रामचन्द्र दोनो ने, दी थी अनुमति औ आज्ञा यही उन्होंने ॥

आज्ञा पालन कीजिए, पिता भ्रात की आप।
निष्कंटक राजा बनो, छोडो शोक विलाप ॥ ३ ॥

धन धान्य पूर्ण समृद्धिशालिनी वसुधा, भोगो जनता को दो सब ही सुख सुविधा।
न्यायानुकूल सत्वाधिकार जनता को, हो स्वतन्त्रता आबाल वृद्ध वनिता को ॥
कर सके न कोई चीटी की भी हानि, सिंह बकरी पीवे एक घाट पर पानी।
हे भरत आपका सर्वोदय शासन हो, मर्यादा मय अत्युत्तम अनुशासन हो ॥

गुरुवर यह प्रस्तावना, और मूल प्रस्ताव ।
शिरोधार्य है आपके, प्रस्तुत सभी सुझाव ॥ ४ ॥

पर कैसे पालन करूं आप आज्ञा का, यह सिंहासन है श्रेष्ठ राम राजा का ।
वे ज्येष्ठ भ्रात हैं वे ही है अधिकारी, इक्ष्वाकु वंश के नियम धर्म अनुसारी ॥
क्या हुआ आज वे यहा नही वन मे है, फिर भी वे मेरे रोम रोम तन मे है ।
श्री राम कल्पद्रुम है मैं लघुतम तृण हूं, श्री राम शिरोमणि है मैं पद रज कण हूं ॥

कहां राम औ कहां मैं, कीजे बात विचार ।
मैं कनिष्ठ वे ज्येष्ठ है, देवे जग धिक्कार ॥ ५ ॥

अपयश कलंक लग जावे राज हरण मे, जीवन परिणित हो जावे नरक मरण मे ।
श्री पिता विवश हो वचन बद्ध के छल से, दे दिया राम को बनोवास छल बल से ॥
श्री राम पिता के अनुपम आज्ञाकारी, चल दिए राज्य को छोड़ बने वनचारी ।
उन दोनो ने अपना कर्तव्य निवाहा, मत दीजे गुरुवर मुझको आप भुलावा ॥

विमुख न होऊं राम से, जब तक तन में श्वास ।
कर्म वचन, मन से रहूं, सदा राम का दास ॥ ६ ॥

प्रीति हो मेरी रामचरण मे ऐसी, मोती चुगने मे हसो की हो जैसी ।
कवि की कविता मे गायक की गीतो मे, सति की पति मे सेनापति की जीतो मे ॥
बिन राम दर्श के पल भर भी है भारी, वन चलने की सब शीघ्र करो तैयारी ।
रघुनदन का वन मे अभिषेक करेंगे, उनके मस्तक पर मणिमय मुकुट धरेंगे ॥

धर्म कर्म का भरत ने, किया उचित उपयोग ।
धन्य धन्य कहने लगे, सभी सभासद लोग ।। ७ ।।

श्री राम मिलन का सबने मन मे ठाना, प्रारभ कर दिया चित्रकूट को जाना ।
जैसे नदिया सागर से मिलने जाती, तैमे जन टोली जाती पाव बढाती ।।
सबके मन मे था मधुर मिलन का मोदा, हो गयी तुरत ही खाली अखिल अयोध्या ।
चलते चलते बिन थके सकल जन सश्रम, जा पहुचे सारे चित्रकूट रामाश्रम ।।

लखनलाल ने देख कर, कहा राम से आर्य ।
चढ़ कर आया है भरत, करने अनुचित कार्य ।।८।।

निश्चय ही यह हमसे लडने आया है, सग मे सशस्त्र सेना सारी लाया है ।
रघुनंदन मुझको आज्ञा दीजे जाऊ, कैकई पुत्र को मार तुरत गिराऊ ।।
ऐसे पापी को जो पर धन हर लेता, वध करने मे ना दोष दिखाई देता ।
सारी सेना को क्षार क्षार कर डारू, जितने आये है योद्धा सबको मारू ।।

क्रोधानल से लखन का, रक्त हो गया गात ।
रामचन्द्रजी ने कहा, शांत रहो हे तात ।।९।।

ऐसी आशंका व्यर्थ करो मत मन मे, आये हैं ये सब मिलने हम से वन मे ।
मिलने को आना इनका बहुत उचित है, कर सकता कभी न अपना भरत अहित है ।।
सौमेत्र सर्वथा सत्य इसे तुम मानो, प्रतिकूल भरत को कभी न हमसे जानो ।
क्या कभी सूर्य पश्चिम मे उदय हुआ है, क्या गगन कभी पाताल प्रदेश छुआ है ।।

क्या अमृत का विष कभी, हुआ हंस का काग ।
क्या समुद्र सूखा कभी, हुआ हिमालय आग ॥१०॥

कर रहे रामजी थे ऐसे उपदेशा, इतने ही मे आ पहुचे भरत सुकेशा ।
लख भरत भ्रात को लगे रामजी उठने, सर झुका दिया झट भरत टेक कर घुटने॥
श्री भरत सुशोभित हुए चरण मे ऐसे, हो देव चरण पर चढा पुष्प हो जैसे ।
श्री राम वेग से झटपट उन्हे उठाया, श्री भरत अंग से राम अग लिपटाया ॥

किया राम ने हृदय से, मिलकर भरत मिलाप ।
सीमा रही न सौख्य की, मिटा सकल संताप ॥११॥

मिल गया रंक को राज्य, तृपित को पानी, मिल गयी अन्ध को आख मूक को वाणी।
पापी को स्वर्गाश्रम डूबत को नैया, मिल गया मात को पुत्र भ्रात को भैया ॥
मिल गये भक्त को जैसे हो भगवाना, मिल गये भरत को तैसे राम महाना ।
आनंद उदधि उमडा अनत आखो से, वह निकली धारा पलको की पाखो से ॥

गदगद हो बोले भरत, मैं पापी मैं भ्रष्ट ।
मेरे कारण आपको, हुए अनेकों कष्ट ॥१२॥

मुझ सा न नीच जन्मेगा कोई जग मे, जो बना शूल साकेत नाथ के मग मे ।
मत बोलो ऐसी बात भरत हे भ्राता, बोले रघुनंदन धन्य तुम्हारी माता ॥
जिसने जन्मा तुमसा सपूत सुविचारी, जगवद्य श्रेष्ठ नर त्यागी जन हितकारी ।
है गर्व मुझे पा कर तुम जैसा भाई, सच्चा सुहृद सहयोगी कुल अनुयायी ॥

इतने ही में आ जुड़ा, झटपट सकल समाज ।
चित्रकूट पर बस गई, आन अयोध्या आज ॥१३॥

तीनो माता मंत्री वसिष्ठ सब आये, श्री राम लखन सीता से मिल सुख पाये ।
श्री जनक सिया की मात सहेली सारी, आ मिले सकल मिथिला के भी नर नारी ॥
कर रहे परस्पर मिलन प्रेम की वर्षा, हिल मिल कर सारे बातें हर्षा हर्षा ।
दुख मे सुख सबको ऐसा भला सुहाया, पतझड़ मे मानो नव वसंत खिल आया ॥

जंगल में मंगल हुआ, हुआ ग्रीष्म में मेह ।
निर्जन में जनपद हुआ, हुआ गगन में गेह ॥१४॥

कर भेंट सबो से बोले श्री रघुराई, श्री पिता नही देते क्यो कर दिखलाई ।
है कुशलक्षेम उनका शरीर तो अच्छा, हे भरत बताओ समाचार सब सच्चा ॥
रो पड़े भरत फिर बोले बलात उदासी, हो गये विरह मे पिता स्वर्ग के वासी ।
क्या कहा भरत हा हत हंत हा हा हा, सर्वस्व हमारा हाय होगया स्वाहा ॥

हाय पिता कह कर गिरे, मूर्छित होकर राम ।
सिया लखन भी गिर पड़े, हुआ विधाता वाम ॥१५॥

सन्नाटा छाया कोलाहल मे भारी, हो गये सभी जन व्याकुल महा दुखारी ।
बहु वेला बीती हुआ चेत जिस क्षण मे, दी जलाजलि श्री राम सिया लक्ष्मण ने ॥
फिर बोले सब जन चलो अयोध्या रामा, बिन आप चले ना चले हमारा कामा ।
जो हुआ उसे कर क्षमा राम बिसराओ, सामग्री लाए हैं अभिषेक कराओ ॥

सुन कर बोले रामजी, देश काल अनुसार।
रहना होगा सबो को, धैर्य धर्म को धार ॥१६॥

इस समय न होगा उचित अयोध्या जाना, है मुझको वन मे चौदह वर्ष बिताना
श्री भरतलाल के राज्य तिलक कर दीजे, नृप आज्ञा को सब शिरोधार्य कर लीजे ॥
झट बोले गदगद होकर भरत अधीरा, पद पकड राम के भर नयनो मे नीरा।
ना हुआ कभी ना होगा ऐसा भाई, होगा कुल मे ज्यो परम्परा चलि आई ॥

आप अयोध्या जाइए, करिए सुख से राज।
मेरा कलुष मिटाइए, रखिए मेरी लाज ॥१७॥

मैं निर्जन वन मे चौदह वर्ष रहूंगा, शीतोष्ण शांति से दुख सुख सभी सहूंगा।
हे राम आप अब शीघ्र अयोध्या जाओ, बिन दोष लगा मम भाल कलंक मिटाओ॥
सुन वचन भरत के बोले राम सुजाना, तुम सा भ्राता इस जग मे दुर्लभ पाना।
ना लगे स्वर्ण के काट जगत सब जाने, जनता है पूर्ण कसौटी सब पहिचाने ॥

करो अवध का राज्य तुम, कहना मेरा मान।
समदृष्टि रख सबों को, समझो एक समान ॥१८॥

चाहे कोई छोटा कोई मोटा हो, चाहे कोई अच्छा कोई खोटा हो।
मत राग द्वेष भय क्रोध तनिक भी रखना, करना अपनी भी कभी न्याय मे परखना ॥
गौ विप्र साधु का स्वागत करते रहना, हे भरत किसी को वचन कठोर न कहना।
जनता की सेवा और सुरक्षा करना, रह अटल सत्य पर नही किसी से डरना ॥

सत्य नीव है धर्म की, सत्य धर्म का सार।
सत्य बराबर पुण्य ना, करो सत्य आचार ॥१६॥

जैसे हो तैसे सदा सत्य पर रहना, है मूल धर्म का सत्य वेद का कहना।
सब धर्मों मे है सबसे सत्य महाना, इस जग मे कोई धर्म न सत्य समाना ॥
संसार सत्य के बल पर खडा हुआ है, सत्यो के तथ्यो से जग जडा हुआ है।
है सत्य ईश का नाम सत्य की जय है, श्री सत्य हि सुन्दर मंगल अजय अभय है ॥

सत्य मान कर चलेगे, सदा सर्वदा काल।
प्राण जाय पर बचन ना, रघुकुल की यह चाल ॥२०॥

जो आज्ञा स्वामी बोल भरतजी धाये, दो स्वर्ण विभूषित चरण पादुका लाये।
फिर करा स्पर्श उनको श्रीराम चरण का, है भार इन्ही पर बोले जग रक्षण का ॥
यह चरण पादुकाये ही राज्य करेंगी, श्री राम कृपा से संकट सभी हरेगी।
फिर मिले विदा होने सब बारंबारा, करुणा का सागर उमडा अपरंपारा ॥

चरण पादुका शीश पर, धरे भरत सुकुमार।
कीर्तन करते राम का, लौट पड़े निज द्वार ॥२१॥

श्री राम राम श्री राम राम श्री रामा, सब पातक नाशक सुखद सुमंगल धामा।
श्री राम राम सम नाम न जग मे कोई, भव सागर से तर जाता जपता जोई ॥
श्री राम नाम की महिमा अपरंपारा, श्री राम नाम मे रमा अखिल संसारा।
श्री राम नाम का उत्तम सबसे नामा, जो पूर्ण करत है सकल मनोरथ कामा ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ८

अयोध्या काण्ड

●

भरत अयोध्या पहुंच कर, हुए बहुत ही क्लान्त ।
दुख से पीड़ित हो गए, तापित और अशान्त ॥१॥

हो रही अयोध्या थी दुखिया श्री हीना, रो रही अयोध्या थी नृप राम विहीना ।
थे बन्द किंवाड घरो के था अन्धियारा, उल्लू बिलाव के बोलन का ना पारा ॥
कूड़ा कचरा था पडा हुआ गलियो मे, कादा कीचड़ था सडा हुआ नलियो मे ।
दुर्दशा देख कर होगये भरत अधीरा, वह निकला आखो से झर झर कर नीरा ॥

बिना पिता अरु भ्रात के, दुखी अयोध्या देख ।
गद गद हो बोले भरत, मिटे न विधि का लेख ॥२॥

क्या थी शोभा सुंदरता इस नगरी की, स्वच्छता सफाई गली गली डगरी की ।
ना गंध अगर चंदन फूलो की आती, जो मुरझे मन की कुम्हली कली खिलाती ॥
ना रंग राग ना नृत्य नाद सुनते है, हाथी घोडे पशु पक्षी सर धुनते है ।
ना सभा समाज न उत्सव देत दिखाई, छा रही पुरी मे चारो ओर फिकाई ॥

अंतःपुर में पहुँच कर, भरत हो गये दीन ।
तात भ्रात बिन तड़प कर, ज्यों पानी बिन मीन ॥३॥

तदनन्तर बोले भरत सभी माता से, गुरुवर वसिष्ठ शत्रुहन लघु भ्राता से ।
मैं छोड अयोध्या नंदिग्राम जाऊंगा, जब राम भ्रात आवेंगे तब आऊंगा ॥
इतने दिन तक मैं वही निवास करूंगा, श्री राम लखन जैसा ही वेष धरूंगा ।
कर कृपा मुझे आज्ञा दे दीजे जाऊं, बन कर बनवासी कंद मूल फल खाऊं ॥

लेकर आज्ञा सबों की, करके भरत विचार।
नंदिग्राम को चल दिए, हो करके तैयार ॥४॥

श्री राम चरण की धरे पादुका सर पर, जा रहे भरतजी नदिग्राम को चलकर।
जब समाचार फैला तब सब जन आये, हो गये सभी के मुख सरोज अलसाये॥
रो पडी प्रजा हो करके महा अधीरा, सुन भरत गमन का लगा हृदय मे तीरा।
छा गई पुरी मे पीडा घोर निराशा, बोले सब ही रो रो कर दुःखी उदासा॥

लगी चोट नृप राम की, मिटी न पिछली पीर।
छोड़ चले अब फिर भरत, धरें कहा हम धीर ॥५॥

इस तरह अवध वासी दुखिया कहते थे, रो रो कर पीडा पर पीडा सहते थे।
गुरुवर वसिष्ठ मत्री सेनापति सारे, शत्रुहन राजपुरोहित सग सिधारे॥
रथ हाथी घोडे ऊंट पालकी पैदल, संग भरतलाल के सभी चल दिए दलबल।
सब रामचंद्र की जयजयकार उचारे, श्री भरतलाल की करे प्रशसा सारे॥

नंदिग्राम में भरतजी, पहुंचे दल बल जाय।
और वहां रहने लगे, तृण की कुटिर बनाय ॥६॥

सिंहासन पर रख चरण पादुका प्यारी, बन गये भरतजी उनके परम पुजारी।
पहिने वल्कल अरु सर पर जटा बढाये, मुनि वेष धरे पूजा कर चंवर डुलावे॥
श्री भरतलालजी ध्वजा धर्म की धारे, शासन करते थे बन सेवक रखवारे।
सब काल राम का नाम लिया करते थे, श्री राम नाम की सुधा पिया करते थे॥

बिना राम के नाम के, पडता था ना चैन।
राम नाम को भरतजी, रटते थे दिन रैन ॥७॥

श्री राम नाम ले भरत राज्य करते थे, तस्कर डाकू पापी हिंसक डरते थे।
गौ ब्राह्मण साधु सत सभी थे सुखिया, सतुष्ट सभी थे नगर ग्राम के मुखिया ॥
सब भांति भरत ने शासन सूत्र सभाला, सब भांति प्रजा का दुःख भय संकट टाला।
उस ओर राम का दर्शन करने भारी, निश दिन जाते थे चित्रकूट नर नारी ॥

देख भीड़ को रामजी, उठ कर एक दिन भोर।
चित्रकूट से चल दिए, पंचवटी की ओर ॥८॥

चलते चलते अत्रि ऋषि आश्रम आया, श्री लखनलाल ने कर सकेत बताया।
हो के प्रवेश आश्रम मे रघुपति रामा, अत्रि अरु अनुसूया को कीन्ह प्रणामा ॥
मुनिवर ने कीन्हा बहु विधि से सन्माना, भोजन हित दीन्हे कन्द मूल फल नाना।
पाकर ऋषि आदर एवं प्रेम पुनीता, सतुष्ट हो गये राम लखन अरु सीता ॥

राम लखन का अत्रि ने, कीन्ह पितृवत प्यार।
अनुसूया ने मातृवत, किया सिया सत्कार ॥९॥

बोली सीता अनुसूया से हे माता, है आप विदूषी वेद धर्म की ज्ञाता।
क्या धर्म सती नारी का है बतलाओ, संयोग मिला है कृपा करो सिखलाओ ॥
सुन कर अनुसूया शात भाव से बोली, मेरे सन्मुख बनती सीता क्यो भोली।
क्या छिपा हुआ है तुमसे बेटी जग मे, तुम हो सतियो की शिरोमणि इस मग मे ॥

तुम से अधिक न जानती, सतियों का मै धर्म ।
फिर भी कहती हूं सुनो, जो नारी का कर्म ॥१०॥

बूढ्‌ढे रोगी अरु दीन हीन पतियो का, बिन कहे करे सब कर्म धर्म सतियो का ।
पति के पीछे परछाईं होकर रहना, है सतियो का शृ गार पति ही गहना ॥
पति चाहे कितना ही निर्गुण निर्धन हो, अर्पण सतियो का पति के हित तन मन हो ।
पति है नारी का पूज्य शास्त्र का कहना, दिन रात सती को पति आज्ञा मे रहना ॥

पति सेवा ही मुख्य है, स्त्री के लिए महान ।
पति सेवा ही ध्यान है, पति सेवा ही ज्ञान ॥११॥

ना चीज जगत मे पति से बढ कर प्यारी, पति सेवा से बढकर के शुभ हितकारी ।
पति सेवा ही नारी जीवन का जप है, पति सेवा के अतिरिक्त न कोई तप है ।
जो पत्नी पति सेवा मे जीवन देती, वह कोटि कोटि व्रत यज्ञ तीर्थ कर लेती ।
पति ही परमेश्वर है नारी के सीता, बिन पति सेवा के नारी जीवन रीता ॥

वंदनीय वह सती है, जो पति पद आधीन ।
दर्शन के वह योग्य है, जो पति सेवा लीन ॥१२॥

उस नारी के चरणो की रज चंदन है, उस नारी की कुटिया नदन कानन है ।
जो पति सेवा कर सती हो गयी नारी, उस नारी की गौरव गाथा है भारी ॥
वह नारी पूजा की सुयोग्य पात्री है, वह नारी जग जननी है जग धात्री है ।
जो लेवे प्रातःकाल सती का नामा, हो मगलकारी पूर्ण मनोरथ कामा ॥

सति समान न अन्य है, जग में नाम पुनीत ।
जहां सती का नाम है, वहां कीर्ति श्री जीत ॥१३॥

जो नारी पतिव्रत का नेम निभाती, वह सती नाम से जग मे ख्याति पाती ।
जो पर पुरुषो को पिता पुत्र सम जोती, वह सती विश्व के सब पापो को धोती ॥
पति हो कुरूप कामी क्रोधी या लोभी, व्यसनी भोगी झूंठा पापी जो सो भी ।
है सदा पूजने योग्य देव सम स्त्री के, कहती विचार सीता मैं अपने जी के ॥

सुन अनुसूया के वचन, बोली सीता मात ।
श्रेष्ठ आपकी सीख है, उच्च आपकी बात ॥१४॥

जिसके सुनने से पुण्य प्राप्त होता है, जिसके करने से सकल पाप खोता है ।
कर कृपा आपने जो उपदेश दिया है, ज्यो का त्यो मैने धारण उसे किया है ॥
मै सदा स्मरण रखूंगी इसको माता, जब तक जीवन ! जब तक है यह गाता ।
श्रद्धा निष्ठा से पालन पूर्ण करूंगी, पति सेवा मे जीऊंगी और मरूंगी ॥

पति सेवा ही धर्म है, पति सेवा ही प्राण ।
पति सेवा ही मोक्ष है, पति सेवा कल्याण ॥१५॥

पति सेवा जिसको प्राणो से भी प्यारी, वह स्वर्ग लोक मे पूजित होती नारी ।
वैकुण्ठ सदा उसका स्वागत करता है, यमराज सदा उससे डरता रहता है ॥
सावित्री की है जग मे कथा पुरानी, श्री सत्यवान पत्नी की अमर कहानी ।
जिसने यम को पति सेवा ही से जीता, जिसका जीवन पति सेवा ही मे बीता ॥

पति सेवा में है जिसे, पूर्ण आत्म विश्वास।
सदा सर्वदा सती वह, रहती पति के पास ॥१६॥

जिस तरह रोहिणी सती चाद की प्यारी, होती पल भर भी नही चाद से न्यारी।
कैलाश शिखर पर सती पति सग साजे, अर्द्धांग पार्वती शिव के सदा विराजे॥
इतिहास आपका है अनसूया माता, अनुप्राणित करता पति सेवा सिखलाता।
भारत के घर घर मे सतियो का वासा, जैसे दीपक मे ज्योति देह मे श्वासा॥

सुन सीता के वर वचन, अनुसूया हर्षाय।
सर सूंघा अरु स्नेह से, छाती लीन्ह लगाय ॥१७॥

फिर दिए दिव्य आभूषण वस्त्र अनेका, औ विविध सुगंधित अंगराज अनुलेपा।
की भेट अनेको चीजें कर मनुहारी, जिनसे अगो की शोभा वढती भारी॥
अनमोल अनेको अलंकार अविकारा, उपहार समझ कर सीता ने स्वीकारा॥
पा अनुसूया आज्ञा औ प्यार अपारा, की धारण सब चीजें नख शिख शृंगारा॥

सीता ने धारण किया, श्री लक्ष्मी का रूप।
अनुसूया देखन लगी, मंजुल मूर्ति अनूप ॥१८॥

छा गई चादनी रात तपोवन सारे, आश्रम ब्रह्मचारी मगल मंत्र उचारे।
तब बोली अनुसूया सीता से वाणी, तुम जाओ राम समीप सती कल्याणी॥
कर सेवा राम चरण की श्रम विसराओ, जाओ भद्रे श्री राम समीपे जाओ।
करके प्रणाम सीताजी तहा सिधारे, थे जहा उपस्थित राम लखन सुकुमारे॥

रामचन्द्र ने देख कर, सीता का शृंगार।
आनन्दित हो प्रेम से, पूछा बारम्बार ॥१६॥

इतनी सामग्री यहा कहा से पाई, सीता ने कह कर सब बातें बतलाई।
सुन अनुसूया का प्रेम सिया के मुख से, श्रीराम लखन आनंदित हो गये सुख से ॥
फिर कीन्ह सिया ने सेवा राम चरण की, अरु अनुसूया की बाते सभी स्मरण की।
करने सेवा को पाच प्रहर जब बीते, बोले रघुनदन सो जाओ अब सीते ॥

पा आज्ञा श्रीराम की, कीन्ह सिया विश्राम।
अमृत वेला में उठे, पुनि लक्ष्मण सियराम ॥२०॥

कर शौच स्नान संध्या पूजा विधि नाना, श्री रामचंद्र ने आगे जाना ठाना।
जब जाने की ऋषियो से आज्ञा चाही, आश्रम मे चारो ओर उदासी छाई ॥
ऋषि मुनि ब्रह्मचारी आश्रमवासी सारे, श्री राम प्रभु से ऐसे वचन उचारे।
आगे जाने का वन पथ दुर्गम भारी, रहते राक्षस बहु हिंसक अत्याचारी ॥

सदा सताते है हमें, देते दुख दिन रात।
हे रघुपति तारो हमें, करते निशिचर घात ॥२१॥

सुन वचन राम मुनियो से वचन बखाना, बस हुआ यहा पर इसी हेतु मम आना।
मत तनिक करो चिंता निर्भय हो जाओ, मै इसीलिए आया हूं मत घबराओ ॥
तब किया स्वस्त्ययन सब ऋषिमुनि ब्रह्मचारी, हो सदा विजय हे रघुपतिराम तुम्हारी।
ले सुभाषीश भक्तो के रक्षक प्राणा, करके प्रणाम ऋषियो को कीन्ह प्रयाणा ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ६

अरण्य काण्ड

•

करके राम विराध वध, शरभंगाश्रम जाय ।
तपोनिष्ट ऋषिवरों के, अनुपम दर्शन पाय ॥१॥

श्रीराम सिया लक्ष्मण ने कीन्ह प्रणामा, ऋषियो ने दी आशीश पूर्ण हो कामा ।
फिर ऋषि मुनियो ने मिल कर वचन उचारे, लेने को सुध बुध रघुवर भले पधारे ॥
रो रो कर बोले सब ऋषि हे भगवाना, देते हमको है कष्ट निशाचर नाना ।
इन सबसे हमरी रक्षा कीजे नाथा, रो पडे राम सुन उनकी दुखमय गाथा ॥

दयावान करुणा नयन, बोले रघुपति राम ।
इसीलिए आया यहां, तज कर निज घर ग्राम ॥२॥

है यही एक उद्देश्य यहा आने का,सौभाग्य मिला ऋषि दर्श स्पर्श पाने का ।
इस वन मे अब राक्षस ना रह पावेंगे, मेरे हाथो से सब मारे जावेंगे ॥
कर दूंगा खाली पृथ्वी निशाचरो से, कर सत्य प्रतिज्ञा कहता ऋषि प्रवरो से ।
भारत भूमि मे पाप न रह पावेगा, सब ओर शीघ्र धर्मोदय हो जावेगा ॥

करने स्थापित धर्म को, अरु अधर्म का नाश ।
आया हूँ घर छोड़ के, करने को वनवास ॥३॥

सुन कर सब ऋषि सुख से हो हो के स्पंदित, श्रीरामचंद्र को दीन्ह विदा आनंदित ।
जहं गए राम तह ये ही रोना धोना, दडकारण्य का छाना कोना कोना ॥
जह देखा राक्षस को तहं उसको मारा, जहं देखा गौ ब्राह्मण भक्तो को तारा ।
ऋषिवर सुतीक्ष्ण से मिले राम फिर जाई, करके प्रणाम बहु बाते सुनी सुनाई ॥

साधु सत ऋषि भक्त की, रक्षा करते राम ।
वन पहाड़ निश दिन फिरे, सर्दी वर्षा घाम ॥४॥

दंडक अरण्य मे ऋषि मुनियो के धामा, कर कर निवास दस वर्ष बिताये रामा ॥
फिर गये अगस्त्याश्रम मे श्री रघुराई, दीन्हे अगस्त्य शिष्यो से घिरे दिखाई ॥
श्री राम लखन सीता ने कीन्ह प्रणामा, मुनिवर अगस्त्यजी बोले जय हो रामा ॥
फिर फल फूलो से कीन्ह राम की सेवा, अरु अर्पण कीन्हे भाति भाति के मेवा ॥

ऋषि अगस्त्य ने राम को, दीन्हें शस्त्र अपार ।
दिव्य धनुष औ बाण औ, तरकस औ तलवार ॥५॥

बोले अगस्त्यजी हे रघुपति भगवाना, गौ ब्राह्मण ऋषि रक्षक हे कृपा निधाना ॥
आ कर वन मे उपकार किया है भारी, भक्तो के प्राणो की रक्षा कर डारी ॥
था भरा राक्षसो से जो उपवन सारा, उसको रघुवर ने निष्कटक कर डारा ॥
हो गया दडकारण्य स्वर्ग से बढ कर, प्रभु के निवास से स्वर्ग लोक से चढ कर ॥

बड़ी कृपा की आपने, दे कर दर्शन नाथ ।
भक्तो को देते रहे, इसी तरह नित साथ ॥६॥

भक्तो को प्रभु पर सदा भरोसा भारी, भक्तो की करते आप सदा रखवारी ॥
जब जब पडती है भीड भक्त पर आकर, तब तब हरते है पीर आप आ आ कर ॥
भक्तो को केवल एक आपकी आशा, श्री चरण कमल मे भक्तो को विश्वासा ॥
भक्त आपको प्राणो से भी प्यारे, कहते पुराण औ वेद ग्रंथ है सारे ॥

भक्त और भगवान का, जोड़ा सदा महान् ।
जहां भक्त रहते वहां, रहते है भगवान ॥७॥

ना पृथक भक्त से रहे कभी भगवाना, संग संग रहते है जैसे ताना बाना ॥
जैसे मन्दिर मे मूर्ति मूर्ति मे देवा, जैसे श्रद्धा मे भक्ति भक्ति मे सेवा ॥
जैसे पुष्पो मे गंध गंध मे अमृत, जैसे वीणा मे तार तार मे झंकृत ॥
जैसे सिंधु मे सीप सीप मे मुक्ता, तैसे भक्तो मे राम राम मे भक्ता ॥

जहां अग्नि तहं धुम्र है, जहां धुम्र तहं ताप ।
जहां आप तहं भक्त है, जहां भक्त तहं आप ॥८॥

सुन ऋषि अगस्त्य के वचन रामजी बोले, थोडे मे सारे नपे तुले रस घोले ॥
हे ऋषिवर सब है सत्य आपका कहना, रहते तह भगवत जहा भक्त का रहना ॥
मैं धन्य मानता हूं अपने को आकर, दर्शन सुखदाई परम आपके पाकर ।
अब मुझको कोई ऐसा स्थान बतावे, जहं सब सुविधा हो आश्रम वहा बनावे ॥

रामचंद्र का सुन कथन, कुछ क्षण सोच विचार ।
ऋषि अगस्त्य श्रीराम से, बोले वचन उचार ॥९॥

हे तात यहा से दो योजन के अन्दर, है पचवटी विख्यात स्थान अति सुन्दर ।
जहं जल फल फूल मूल सब की सुविधा है, ना किसी तरह की वहा कोई दुविधा है ॥
वह वनस्थली है वडी मनोरम स्वच्छा, तहं रहो वना कर आश्रम अनुपम अच्छा ।
हे भक्तो के प्रतिपालक राक्षस नाशा, तहं जाकर कीजे सुख से आप निवासा ॥

श्री अगस्त्य के सुन वचन, लक्ष्मण सीता राम ।
पंचवटी को चल दिए, कर साष्टांग प्रणाम ॥१०॥

चलने ही महुए का वन दिया दिखाई, जिसके उत्तर से चले राम रघुराई ।
वन के पशु पक्षी देख पास आते थे, वन श्री को देखत राम सिया जाते थे ॥
थे विविध रग के पत्र पुष्प मनहारी, थे विविध ढंग के लता वृक्ष सुखकारी ।
आगे विस्तृत मैदान एक फिर आया, उससे आगे एक पर्वत दिया दिखाया ॥

पंचवटी पथ बीच में, मिला गिद्ध एक आन ।
महाकाय को देख कर, पूछा श्री भगवान ॥११॥

है कौन आप कर कृपा मुझे कह दीजे, पक्षी बोला प्रभु ध्यान लगा सुन लीजे ।
कश्यप का पोता नाम जटायु मेरा, श्री नृप दशरथ का मित्र राम का चेरा ॥
सुन वचन राम ने झटपट गले लगाया, दुख सुख दोनो ने अपना कहा सुनाया ।
फिर चले वहा से आगे चरण बढा कर, रुक गये सभी जा पंचवटी मे जा कर ॥

पंचवटी पर पहुँच कर, मुग्ध हो गये राम ।
लख कर सुंदर सुखद तरु, सफल सजल वन श्याम ॥१२॥

श्री गोदावरी समीप बनाया आश्रम, श्री लक्ष्मणजी ने करके अथक परिश्रम ।
गोमय मिट्टी की सुदृढ भीति बनाई, सभो के ऊपर बासो की छत छाई ॥
मजबूत रस्सियो से कस करके बाधा, दे शमी वृक्ष की शाखाओ का साधा ।
छा सरकडे कुश काश बिछा कर पत्ते, दे दिये बना कर जगह जगह पर बत्ते ॥

निर्मित करके लखन ने, योग्य निवास स्थान ।
दे देवों को पुष्प बलि, कीन्ह शांति शुभ गान ॥१३॥

रमणीय कुटी लख राम सियाजी बोले, श्री लखनलाल से वचन प्रेम के घोले ।
कितनी सुन्दर सौमित्र बनायी शाला, रख कर जाली आने को हवा उजाला ॥
भीतो पर कितने सुन्दर चित्र बनाये, आखो को मोहे मन को भले सुहाये ।
फल फूलो पत्तो की लख बंदनवारा, ना रहा हृदय मे सुख का पारावारा ॥

राम लखन सीता सहित, और जटायु पास ।
पंचवटी की कुटी में, करने लगे निवास ॥१४॥

कुछ दिन बीते तब शूर्पणखा वहं आई, लख राम लखन को सुध बुध गई भुलाई।
बोली रघुपति से पति मेरे बन जाओ, छोड़ो इस सीता को मेरे संग आओ ॥
फिर करन लगी वह अनुचित बात ढिठाई, हो कर निर्लज्जा स्त्री मर्याद गवाई ।
सुन शूर्पणखा की बात राम सकुचाये, अरु बोले थोड़े शब्द शुद्ध सुलझाये ॥

मुझसे कभी न होयगी, पूरी तुम्हरी आश ।
तुम जाओ भद्रे वहां, लखनलाल के पास ॥१५॥

तब लखनलाल ढिग आकर के वह बोली, अरु छेड छेड़ कर करने लगी ठिठोली ।
श्री लखनलालजी करते बात लजाये, जाने को उसको बहुत बार समझाये ॥
पर शूर्पणखा मानन वाली थोडी थी, वह निशाचरी ढीठी थी मुंह फोडी थी ।
वह लगी वहां पर भारी उधम मचाने, अरु झपटी सीताजी को मुंह मे खाने ॥

बचा सिया के प्राण को, होकर बहुत सचेत ।
रामचंद्रजी ने किया, लक्ष्मण को संकेत ॥१६॥

क्रोधित लक्ष्मणजी ने झट दिया झपाटा, पट शूर्पणखा के नाक कान को काटा ।
शूर्पणखा जोरो से रोयी चित्कारी, हो गयी खून से लथपथ देही सारी ॥
पहुची चिल्लाती भाई खर के पासा, जो जन स्थान मे करता नित्य निवासा ।
अपने दुख की सब घटना कथा सुनायी, फिर पडी धरणि पर खर के सम्मुख जाई ॥

खरदूषण त्रिशिरा सहित, शूर्पणखा के साथ ।
चले राम से लेन को, बदला हाथों हाथ ॥१७॥

चौदह सहस्र सग लेकर राक्षस सेना, पहुचा खर क्रोधित हो कर बोला बैना ।
क्या नही जानते मुझको तुम रे मानव, मैं महा भयकर काल रूप हू दानव ॥
क्यो शूर्पणखा के नाक कान को काटा, मैं अभी उतारु तुम्हे मौत के घाटा ।
बोले क्रोधित हो कर के लक्ष्मण लाला, रे ठहर दुष्ट आया तेरे सर कोला ॥

रामचद्र ने रोक कर, कहा लखन से वीर ।
इसका जीवन हरेंगे, मेरे धनु के तीर ॥१८॥

तुम सावधान रह सिय की रक्षा करना, मत मन मे मेरा सोच तनिक भी रखना ।
कह कर टूटे राक्षस सेना पर रामा, औ लगे भेजने मार मार यम धामा ॥
झपटा जैसे चिडियो पर होवे बाजा, झपटा जैसे हरिणो पर हो मृग राजा ।
तैसे रघुनदन रामचद्र रघुराई, झपटे राक्षस सेना पर क्राय रिसाई ॥

खर आदिक राक्षस सकल, थे दस चार हजार।
किया राम ने सबो का, बाणों से संहार ॥१६॥

हो कर प्रसन्न देवो ने शख बजाया, हर्षित ऋषियो ने कीर्ति गान को गाया।
हे राम आपकी महिमा का ना पारा, है आप विश्व के मूल और आधारा ॥
गौ ब्राह्मण साधु सत भक्त के तारक, पापी पिशाच दैत्यो दुष्टो के मारक।
सस्थापक धर्म सनातन के सरक्षक, करते तव कीर्तन सुर नर किन्नर यक्षक ॥

राम नाम के नाम की, महिमा अपरंपार।
जो श्रद्धा से जपे सो, हो भवसागर पार ॥२०॥

कितने भी हो दुख कष्ट सभी मिट जाते, श्री राम नाम के निकट विघ्न ना आते।
ना भूख प्यास सर्दी गर्मी लगती है, जह राम नाम की अमर ज्योति जगती है ॥
ना रहे जगत मे उसको कोई घाटा, जिसनै खोली श्री राम नाम की हाटा।
श्री राम नाम की खिली जहा फुलवारी, उस घर की शोभा तीन लोक से न्यारी ॥

राम नाम सबसे बडा, तीन लोक के मांहि।
वेद रटे ब्रह्मा रटे, नारद शारद गाहि ॥२१॥

श्री राम नाम जो जपते साझ सकारे, वे भक्त राम को प्राणो से भी प्यारे।
श्री राम नाम की जो जपते है माला, उनने घट पट का खोल दिया है ताला ॥
श्री राम नाम की जिसने पकड़ी डोरी, उस बडभागी ने काल पाश को तोडी।
श्री राम नाम को जिस किसने भी गाया, उस बड भागी ने परम मोक्ष पद पाया ॥

गिरीश रामायण

अध्याय १०

अरण्य काण्ड

●

राम लखन श्री जानकी, भूल अयोध्या ग्राम ।
सुख पूर्वक रहने लगे, पंचवटी के धाम ॥१॥

श्री पंचवटी मे लता कुंज लहरावे, फूलो पर भंवरो की पंक्ति मंडरावे ।
तितली फर फर फर करती इत उत डोले, अमवा की डाली पर कोयलिया बोले ॥
फल पके हुए वृक्षो के लगे सुहाने, शुक बोल रहे बहु रंग रंगीले नाने ।
कोमल कमलो की छटा निराली जल मे, आनंद उमडता झरनो के कलकल मे ॥

थिरक थिरक कर नाचते, छतरी कर कर मोर ।
मृग कपोत खरगोश औ, सारस हंस चकोर ॥२॥

सीता गगरी भर भर वृक्षो को सीचे, यह दृश्य अनोखा सबके मन को खीचे ।
श्री लखनलालजी फल फूलो को तोडे, सब भाति भाति के सुन्दर थोड़े-थोडे ॥
केला अनार नारगी आम अंगूरा, श्रीफल जामुन सीताफल सेव खजूरा ।
गेंदा गुलाब चंपा जूही गुलज्हारा, केवड़ा चमेली वेला हार सिंगारा ॥

शीतल मंद सुगंध युत, बहती मधुर बयार ।
लता वृक्ष से लिपट कर, करती स्नेह अपार ॥३॥

श्री रामचन्द्रजी हर्षित अनुपम भारी, कर रहे निरीक्षण घूम घूम कर क्यारी ।
संग मे मृग शावक गौ वत्सो की टोली, जिनकी आकृतिया मनहर भोली भोली ॥
अपने हाथो से उनको घास खिलाते, अपनी अंजलि से पानी उन्हे पिलाते ।
फिर दौड़ दौड़ कर उछल कूद कर खाई, क्रीडा करने उनके संग श्री रघुराई ॥

पशु पक्षी के संग में, लखन सिया रघुनंद।
बैठ प्रेम से खा रहे, मूल फूल फल कद ॥४॥

सब भूल भूल कर पशु पक्षी का भेदा, सब भूल भूल कर मनस्ताप औ खेदा।
सब मिल जुल कर परिवार एक की नाई, कर रहे भोज होकर प्रसन्न मन माही ॥
श्री रामचन्द्रजी रुच रुच भोग लगावे, वसुधा कुटुंब की जग मे ज्योति जगावे।
श्री सीता लक्ष्मण मन ही मन मुस्कावे, यह परम मनोहर अनुपम दृश्य सुहावे ॥

वृद्ध जटायू दूर से, देख रहे आनद।
लुटा रहे फल मोक्ष के, पके हुए रघुनंद ॥५॥

हो रहा इधर आनंद अथाह अपारा, पहुची शूर्पणखा उत रावण के द्वारा।
रावण बैठा था सत महलो की छत पर, इक बहुत बडे सोने के सिंहासन पर ॥
विकराल भयकर महा प्रलय के जैसा, दस शीश भुजाएं बीस हिमालय जैसा।
लबा चौडा वक्षस्थल भरकम भारी, सब अस्त्र वस्त्र आभूषण आयुध धारी ॥

राम लखन ने जो किया, शूर्पणखा के साथ।
रोकर बोली जोर से, कर कर ऊंचे हाथ ॥६॥

रावण ने पूछा क्रोधित होकर भारी, है कौन राम वह निष्ठुर अत्याचारी।
वह दुर्गम दंडक वन मे कैसे आया, है कैसे उसके शस्त्र रूप बल काया ॥
सुन शूर्पणखा ने परिचय सारा दीन्हा, चौदह हजार राक्षस को जस वध कीन्हा।
है कामदेव से सुंदर तनु धनु धारी, संग है छोटा भाई अरु सुंदर नारी ॥

सीता उसका नाम है, सुंदर रूप अनूप।
योग्य तुम्हारे लिए वह, पत्नी के अनुरूप ॥७॥

उसके समान ना भूमंडल मे नारी, रति से सुन्दर कोमल मोहक छवि प्यारी।
मै उसे तुम्हारे लिए यहा लाने को, जब पहुची उसके पास उसे पाने को ॥
जब जान गया लक्ष्मण इच्छा मम मन की, तब करी दुर्दशा ऐसी मेरे तन की।
खर दूषण त्रिशिरा जन स्थान के वासी, चौदह हजार सेना संग हुए विनासी ॥

तुम्हरे जीवित यह दशा, हुई हमारी आज।
डूब गई लंका पुरी, और तुम्हारी लाज ॥८॥

सुन शूर्पणखा की बात कुपित दश शीशा, क्रोधित उठ कर चल पड़ा निशाचर ईशा।
तूफान चला हो जैसे दीप बुझाने, भूकप चला हो जैसे नीड़ मिटाने ॥
तैसे रावण चल चढा गधो के रथ पर, रथ चला भूमि कापी तब थर थर थर थर।
पशु पक्षी स्थावर जंगम सब घबराए, लख क्रोधित रावण को सब जन थर्राए ॥

नद नदियों को लांघता, करता पर्वत पार।
जा पहुंचा रावण तुरत, मारिच आश्रम द्वार ॥९॥

जब देखा मारिच ने रावण को आया, कर सेवा पूजा सादर उसे बिठाया।
जल अन्न और फल से कीन्हा सत्कारा, आने का कारण पूछा वचन उचारा ॥
हे राक्षस राज बताओ कैसे आये, देते दिखलाई क्यो हो तुम अलसाये।
है लंका नगरी मे तो सब ही सुखिया, क्यो देते हो तुम आज दिखाई दुखिया ॥

सुन मारिच के यह वचन, बोला निशिचर नाथ।
तात विपत्ति के समय, दो मुझको तुम साथ ॥१०॥

मेरे भाई खर दूषण त्रिशिरा सारे, एक राम नाम के नर ने निर्भय मारे।
चौदह हजार राक्षस का किया विनाशा, कर दिया हमारा उसने सत्यानाशा ॥
जब शूर्पणखा ने जा कर उसको डाटा, उसके भाई ने नाक कान को काटा।
मैं बदला उससे लेने को जाता हूं, उसकी सीता को बल से हर लाता हूं ॥

राम राम क्या कह रहे, करते किसकी बात।
छू मत लेना तुम कभी, सीताजी का गात ॥११॥

क्यो क्या है ऐसी बात बताओ ताता, क्या जलती अग्नि है सीता का गाता।
अग्नि ही क्या है महाप्रलय की ज्वाला, मत छू लेना तुम सिय को रखना ख्याला ॥
हो जाओगे तुम भस्म राख की ढेरी, मानो हितकारी बात तात तुम मेरी।
उसका पति है दशरथ सुत राम सुजाना, बल वीर्य शौर्य मे जग विख्यात महाना ॥

रावण बोला गरज कर, क्या कहते हो तात।
मुझसे बढ़ कर विश्व में, जन्मा किसको मात ॥१२॥

मैं सुर नर किन्नर यक्ष सबो का राजा, पशु पक्षी राक्षस पृथ्वी का महाराजा।
क्या चीज राम है गाते यश तुम जिनका, मैं हाथी हू है राम तनिक सा तिनका ॥
मैं अजर अमर मुझको शंकर का वर है, फिर तुम हो मेरे साथ मुझे क्या डर है।
तुम महा पराक्रमशाली योद्धा भारी, नाना प्रकार के भावी माया चारी ॥

तात शीघ्रता से चलो, करो न तनिक विलंब ।
लेकर आया आश मै, दो मुझको अवलंब ॥१३॥

रावण के मुख से सुन कर बाते सारी, मारिच ने हित की सच्ची बात उचारी ।
मत बात कभी तुम मुंह मे ऐसी डालो, हे राक्षस राज शपथ मन मे तुम खालो ॥
है पाप भयंकर छूना पर नारी को, हर कर घर पर लाना है महमारी को ।
मत पाप पूर्ण खोटी बुद्धि को ठानो, हो जाओगे तुम नष्ट बात मम मानो ॥

जनक नंदिनी सिया के, है पति रघुवर राम ।
भूल चूक जाना नही, रावण उनके धाम ॥१४॥

वह विक्रम पोरुप मे है सूर्य समाना, क्या सरल काम है सूर्य प्रभा हर लाना ।
मत कभी स्वप्न मे भी साहस यह करना, सम्मुख जाने मे सदा राम के डरना ॥
जब दृष्टि राम की पडे तुम्हारे ऊपर, तुम रह न सकोगे जीवित तब इस भू पर ।
शिव धनुप तोड़ सीता को वरणा जिसने, है कौन विश्व मे राम न जाना किसने ॥

सुनो लगा कर ध्यान तुम, एक समय की बात ।
मै घूमा धारण किए, पर्वत का सा गात ॥१५॥

था मुझ मे तब बल इक हजार हाथी का, राक्षस सेना का औ सुबाहु साथी का ।
मैं पहुचा विश्वामित्र ऋषि के आश्रम, वह करते थे तब हवन यज्ञ का उपक्रम ॥
मैं ध्वंस यज्ञ को करने पाव वढाया, तब वाण एक श्री रामचंद्र का आया ।
जिसने मुझको सो योजन दूर गिराया, मैं अपने को अन्दर समुद्र के पाया ॥

तब से आ कर के यहां, करता हूं विश्राम ।
मत लो मेरे सामने, बंधु राम का नाम ॥१६॥

मैं डरता हूं श्री रामचंद्र से इतना, डरता मृग शावक सिंहराज से जितना ।
मैं दे न सकूंगा साथ साफ कहता हूं, ऋषि व्रत धारण कर छिप करके रहता हूं ॥
तुम भी मानो मम सीख लौट घर जाओ, मत रामचंद्र की सीता को हर लाओ ।
ना छोड़ोगे यदि पाप कृत्य यह करना, होगा तुमको बंधु बाधव संग मरना ॥

रावण बोला क्रोध कर, मारिच से ललकार ।
मुझको ऐसा कह रहे, है तुमको धिक्कार ॥१७॥

मैं नही सीख लेने तुमसे आया हूं, मैं सारी बातें सीखा समझाया हूं ।
मैं राम प्रिया सीता को अवसि हरूंगा, निश्चित विचार दृढ़ है यह पूर्ण करूंगा ॥
मैं इन्द्र अग्नि यम व्योम वरुण का राजा, मैं कर न सकूं ऐसा जग में ना काजा ।
क्या डर बतलाते हो मुझको मानव का, मैं लंकापति महाराज देव दानव का ॥

मैं कहता हूं सो करो, चल कर मेरे साथ ।
नहि तो तुमरी होयगी, हत्या मेरे हाथ ॥१८॥

मैं कहता हूं सो होगा तुमको करना, मैं निकट रहूंगा नही राम से डरना ।
तुम सोने का मृग बन कर अनुपम जाओ, सीता के सम्मुख विचरो उसे लुभाओ ॥
जब देख तुम्हें सीता मन ललचावेगी, जब पकड नही सीता तुमको पावेगी ।
तब राम तुम्हारे पीछे पड जावेगे, तुम धावोगे उस ओर राम धावेंगे ॥

तुम्हे पकड़ने के लिए, कर प्रयत्न भरपूर ।
राम सिया को छोड़ कर, चले जांय जव दूर ॥१६॥

तव करना ऊंचे स्वर मे तुम उच्चारण, उन ही के स्वर मे हा सीते हा लक्ष्मण ।
घवरा कर झट तव लखन दौड जावेगा, सीता हरने का अवसर मिल जावेगा ॥
विन किए युद्ध मैं सीता हर लाऊंगा, हर कर सीता को लंका ले जाऊंगा ।
जव सीता को ना रामचद्र पावेगा, उसके वियोग मे दुख कर मर जावेगा ॥

सुन कर रावण के वचन, हुआ दुखित मारीच ।
सोचा मन में हायरे, है कैसा यह नीच ॥२०॥

फिर वोला राजन रावण शिक्षा मानो, मैं कहता हूं सो सारी सच्ची जानो ।
सीता को हर कर तुम ना सुख पावोगे, लंका उजडेगी तुम मारे जावोगे ॥
मैं मर जाऊंगा मृग वन कर जाते ही, तुम मर जावोगे सीता हर लाते ही ।
है अभी समय कुछ समझो सोचो तोलो, जिससे संकट आवे ऐसा मत वोलो ॥

रावण वोला समझ कर, वोलो मुंह से वात ।
कैसी वाते कर रहे, हुआ तुम्हे क्या तात ॥२१॥

मम कार्य करो तुम सिद्ध शीघ्र संग चल कर, वैठो रत्नो से भूषित सुन्दर रथ पर ।
मैं एक वात ना अव सुनने वाला हूं, मैं महाकाल भूचाल प्रलय ज्वाला हूं ॥
घवरा कर मारिच वोला राजन अच्छा, लो चलो चलूंगा जहा तुम्हारी इच्छा ।
चढ कर मारिच रावण दोनो झट रथ पर, चल दिए वेग से पचवटी के पथ पर ॥

गिरीश रामायण

अध्याय ११

अरण्य काण्ड

•

सीता के श्रम से खिला, पंचवटी उद्यान ।
कोकिल कूकू कूजती, अलिगण गाते गान ॥१॥

श्री राम लखन सुख से दिन रात बिताते, वनवासी के सब सानंद नेम निभाते।
उठ कर अमृत वेला मे प्रात. काला, कर शौच स्नान जपते गायत्री माला ॥
कर यज्ञ हवन स्वाध्याय वेद का करते, गुरु मात पिता का ध्यान हृदय मे धरते।
फिर लखनलालजी कद मूल फल लाते, संग बैठ सबो के राम सियाजी खाते ॥

बीत रहे थे इस तरह, एक एक कर दिन रात ।
राम लखन करने लगे, एक दिन मन की बात ॥२॥

कब चलना होगा अवधपुरी को ताता, अब कितने दिन है वनोवास के भ्राता।
कब मात भ्रात गुरु के दर्शन पावेगे, कब पंचवटी से अवधपुरी जावेगे ॥
सुन वचन लखन के रमापति प्रभु रामा, वोले अब शीघ्र चलेंगे निज घर ग्रामा।
कुछ ही दिन अब तो शेष रहे है भाई, क्यो आज अचानक घर की सुधबुध आई ॥

बीत रहे चौदह वर्ष, कुछ ही दिन अब शेष ।
लौटेंगे अब शीघ्र ही, अपने अवध स्वदेश ॥३॥

घर चलने की अब करनी है तैयारी, ले चलनी होगी पंचवटी फुलवारी।
जिसको सीता ने सीच सीच कर पाली, जिसकी तुमने की है सेवा रखवाली ॥
सुन वचन राम के लक्ष्मण हुए मुदीता, आ गई वहा पर इतने ही मे सीता।
थी भरी हुई सुमनो से उनकी झोली, दौड़ी दौडी आ करके झटपट बोली ॥

फुलवारी में देखने, शीघ्र चलो आचार्य ।
आया है अचरज भरा, हरिण एक हे आर्य ॥४॥

श्री राम लखन चल दिए सिया के संगा, पहुंचे फुलवारी में था जहां कुरंगा ।
श्री लखनलाल दृष्टि पड़ते ही बोले, आहा भाभी इस मृग के अंग अमोले ॥
विधि ने इसका बहु अद्भुत रूप बनाया, बिजली सी चमके कंचन जैसी काया ।
वैदूर्यमणि के खुर चम चम चम चमके, अरु पूंछ इंद्र के धनुष रंग सी दमके ॥

रंग रंगीली बुंदकियां, रत्न दिखाई देत ।
भांति भांति के रंग से, चित्रित मन हर लेत ॥५॥

है श्याम श्वेत रतनारे नैना सुंदर, है कर्ण कमल नीले से कोमल मनहर ।
मुख मोहक मिश्रित रंग श्वेत औ काला, भू मंडल में ऐसा ना देखा भाला ॥
हैं इंद्र नीलमणि से दो सींग सुशोभित, ऐसा को जग मे देख न हो जो मोहित ।
श्री रामचंद्रजी देख सुन रहे थे सब, मृग फदक फदक कर दूब चर रहा था तब ॥

बोली सीता स्नेह से, हे प्रिय पति रघुनाथ ।
अवध ले चलेंगे अवसि, इस मृग को भी साथ ॥६॥

यह कितना अद्भुत और अलौकिक प्यारा, सोने का मृग रत्नों से सुजड़ित न्यारा ।
इसकी शोभा ध्वनि चाल अनोखी सोहे, यह रंग रगीला अद्भुत मन को मोहे ॥
हे नाथ चला यह झटपट पीछे जाओ, यह कुतूहलकारी हरिण पकड़ कर लाओ ।
सुन कर सीता की बातें श्री भगवाना, बोले लक्ष्मण से वाणी कृपा निधाना ॥

सावधान सौमेत्र तुम, रहना सिय के साथ ।
कह कर मृग को पकड़ने, चले गए रघुनाथ ॥७॥

मृग डर कर छिपता छिपता दौड़ा आगे, श्री रामचंद्रजी उसके पीछे भागे।
मृग हाथ न आया किया परिश्रम पूरा, चल दिए रामजो आश्रम से वहु दूरा ॥
छिपता दिखलाई देता करता छल वल, होता जाता था आंखो से मृग ओझल।
तव राम प्रभु ने धनुष हाथ मे धारा, अरु खीच जोर से वाण हरिण के मारा ॥

वज्र तुल्य वह बाण जा, घुसा हृदय के मांहि ।
मारिच मर करके पड़ा, ताड़ पेड़ की नांहि ॥८॥

मरता वह बोला हा सीते हा लक्ष्मण, श्री रामचन्द्र के स्वर मे किया उचारण।
सुनते ही सीता का मन धड़ धड़ धडका, अरु नेत्र दाहिना फड़ फड फड फड फडका ॥
है आर्तनाद हा स्वामी का ही यह तो, फस गये विपद मे हैं अवश्य ही वे तो।
दौडो दौडो लक्ष्मण लक्ष्मण झट जाओ, करके सहायता उनको शीघ्र वचाओ ॥

लक्ष्मण क्या ना सुन रहे, भ्राता रहे पुकार ।
जाओ झटपट दौड़ के, करो न तनिक अवार ॥९॥

वोले लक्ष्मण मत सोच करो हे माता, फंसने वाले है नही विपद मे भ्राता।
गंधर्व नाग राक्षस पिशाच अरु दानव, सुर असुर जीव जंतु पशु पक्षी मानव ॥
कोई परास्त ना कर सकता रघुवर को, तुम छोडो चिंता दुर्वलता अरु डर को।
श्री राम युद्ध में है अवध्य सच जानो, यह वाणी उनकी नही वात मम मानो ॥

यह माया की ध्वनि है, छोड़ो सब संताप ।
अपने आतुर हृदय को, शांत करो मा आप ॥१०॥

रघुनाथ शीघ्र ही लौट अभी आवेंगे, संग मृग को या तत चर्म अवसि लावेंगे ।
सुन वचन लखन के हुआ न सिय को धीरा, उठ पड़ी हृदय मे अतिशय शका पीरा ॥
सिय डरी मृगी सी आसू लगी वहाने, अरु डूब शोक सागर मे लगी नहाने ।
फिर गद्गद हो कर बोली सीता वचना, तुम कहते हो सो मुझको जचता सच ना ॥

खड़े खड़े क्या देखते, करो न तनिक विलब ।
जाओ लक्ष्मण दौड़ कर, दो उनको अवलंब ॥११॥

बोले लक्ष्मण सीता से सुदृढ वाणी, मत तनिक करो शंका मन मे कल्याणी ।
मत खोवो मन से कभी आप विश्वासा, श्री राम अभी आवेंगे रखो आशा ॥
कर सावधान रक्षा को कह गये भ्राता, मैं छोड आपको कैसे जाऊं माता ।
हैं आप धरोहर राघव की मम पासा, मैं छोड नही सकता जब तक है श्वासा ॥

सीता बोली क्रोध कर, जान गई मै बात ।
छिपे हुए तुम शत्रु हो, करना चाहत घात ॥१२॥

बस इसीलिए तुम नही दौड जाते हो, संकट की वेला नही काम आते हो ।
सुन कर कठोर यह वचन सिया के मुख से, झुक गये भूमि पर लखन लाज से दुख से ॥
सुन बात सिया की लगा हृदय मे तीरा, आखो से आसू टपके निकला नीरा ।
थी विकट समस्या लखनलाल के सन्मुख, क्या करें यही वे सोच रहे थे नत मुख ॥

जाना ही अब ठीक है, जहां भ्रात है राम।
निर्णय कर सिय चरण में, कीन्हा लखन प्रणाम ॥१३॥

श्री लक्ष्मण ने फिर पर्णकुटिर के द्वारा, दी धनुष बाण से नागलीक की कारा।
जो भी कोई इसके अन्दर आवेगा, वह जल कर भस्म तुरत ही मर जावेगा॥
हे वन देवी सीता की रक्षा करना, कह कर लक्ष्मण चल दिए उठा कर चरणा।
अवसर पा कर रावण भिक्षुक वन आया, आ कर सीता के द्वारे अलख लगाया॥

सुन कर सीता अलख को, अतिथि आया जान।
कंद मूल फल फूल का, देने आई दान ॥१४॥

सीता के दर्शन कर भिक्षुक ललचाया, पर कार लगी थी अतः निकट नही आया।
हो कामातुर मोहित भिक्षुक झट बोला, वहु दीन भाव से फैला करके झोला॥
है कार लगी औ बंधी हुई यह भिक्षा, इसको ना लेता मम गुरु की है शिक्षा।
यदि देनी है भिक्षा तो बाहर आओ, पति हो तेरा चिरजीवि तुम सुख पाओ॥

लौट न जावे द्वार से, बिना भीख यह जान।
लांघ लीक बाहर निकसि, सीता देने दान ॥१५॥

आते ही बाहर उठा तुरत सीता को, ले उडा दशानन रोती भयभीता को।
जब सुनी जटायु ने करुणा वाणी को, है कष्ट आज इतना हा किस प्राणी को॥
तब अपनी ऊंची ग्रीवा आख घुमाई, सीता ले जाता रावण दीन्ह दिखाई।
धिक्कार जटायु ने उसको ललकारा, रे ठहर निशाचर पापी अधम अपारा॥

पहुंच जटायु सामने, रावण का पथ रोक।
बोला तव दुष्कृत्य पर, है मुझको हा शोक ॥१६॥

हे महाबली लंकापति राक्षस राजा, हरने मिथ को आई ना तुमको लाजा।
क्यों किया हाय तूने यह निंदित कर्मा, पर नारी को हरना है महा अधर्मा ॥
अतएव शीघ्रता से सीता को छोडो, इस महापाप से सत्वर मुंह को मोडो।
घर जा करके इसका प्रायश्चित करना, चुल्लू भर जल मे नाक डुबो कर मरना ॥

रावण होकर क्रोध में, कर कर आखे लाल।
झपट जटायु पर पडा, हो करके विकराल ॥१७॥

छिड गया परस्पर मे संघर्ष महाना, दोनो के बल का पार न दोनो जाना।
दो घड़ी हुआ डट युद्ध भयंकर भारी, हो मार काट लोहू लुहान खुंखारी ॥
बलवान जटायु ने रथ तोड गिराया, नख चोंच पंख मे दारुण द्वंद्व मचाया।
रावण घायल हो मूर्छित चक्कर खा कर, आकाश देश से गिरा भूमि पर आकर ॥

फिर रावण उठ क्रोध कर, ले कर में तलवार।
युद्ध नियम को भंग कर, कीन्ह कपट के वार ॥१८॥

वर वीर जटायु ने यद्यपि वहु डाटा, पर पंख पैर पार्श्व भाग गये काटा।
गिर गए भूमि पर गिद्धराज हो विवशा, रख कर सीता के चरणो मे निज शीशा ॥
इस करुण दृश्य को देख सके ना कोई, सीता हाथो मे आखें ढक कर रोई।
श्री भक्त जटायु लगे राम को रटने, एक एक कर जीवन श्वास लगे सब घटने ॥

दुष्ट दुराचारी अधम, रावण डाकू चोर।
ले सीता को उड़ चला, निज लंका की ओर ॥१९॥

सीता ने रावण को झिड़का धिक्कारा, फिर रो रो कर के राघव राम पुकारा।
करके विलाप बोलीं रो रो वैदेही, हे बादल वायू नभचर बंधु सनेही॥
सुनता हो जो भी राघव को यह कहना, है बिना आपके दुस्तर जीवित रहना।
होवे जितनी जल्दी प्रभु दर्शन देना, दासी सीता की सुधबुध सत्वर लेना॥

सीता हर कर ले गया, रावण अपने धाम।
उधर देखकर लखन को, बोले झट से राम ॥२०॥

क्यों आये लक्ष्मण शीघ्र बताओ भाई, क्यों मुख मंडल पर रही उदासी छाई।
क्यों छोड अकेली सीता को निर्जन में, क्यों आये दौडे मिलने मुझसे वन मे॥
हो रहे मुझे अपशकुन भयंकर भारी, है तो प्रसन्न हे लक्ष्मण जनक दुलारी।
बोले लक्ष्मण सुन वचन राम के मुख से, है सीता माता अति प्रसन्न औ सुख से॥

चिंता थी बस आपकी, और नई ना बात।
दिया सुनाई आपका, क्रंदन सा हे तात ॥२१॥

सीता मां ने मुझको कर विवस पठाया, उनकी बलात आज्ञा से दौड़ा आया।
सुन बात लखन की प्रभु ने वचन उचारे, तुम आए लक्ष्मण मन में बिना विचारे॥
थी माया यह तो निशाचरों की सारी, हा लक्ष्मण तुमने बडी भूल कर डारी।
फिर दोनो भाई पैर उठा कर धाए, दौडे दौड़े झट पर्ण कुटिर पर आए॥

गिरीश रामायण

अध्याय १२

अरण्य काण्ड

सीते सीते से सकल, ध्वनित हो गये धाम ।
वन पहाड़ सरिता गुहा, खोजत सीता राम ॥१॥

श्री राम सिया के विना हो गये वेसुध, श्री लक्ष्मण ने दी यद्यपि वहु विधि से बुध।
जैसे विन वाती के दीपक हो जाता, जैसे विन अंखियो के पंथी खो जाता ॥
विन स्वाति बूंद के चातक जिमि कलपाता, विन पंखो के पंछी जैसे तडपाता ।
तैसे तड़पाते बिना सिया के रामा, हो गए दुखी विन सीता के सुख धामा ॥

बिना सांस के देह ज्यों, बिना गंध के फूल ।
विना प्रभा के चॉद ज्यों, बिना नदी के कूल ॥२॥

सब स्थान सिया को खोज रामजी हारे, कर कर विलाप विटपो से वचन उचारे ।
हे चंदन बिल्व कदंव केवडे भाई, क्या देखी तुमने सीता की परछाई ॥
हे जामुन आम अनार कनेर सुपारी, देखी क्या तुमने सीता की छवि प्यारी ।
कृश अंग फूल सी कोमल साडी पहिने, नव रत्न जड़े सोने के पहिने गहने ॥

मौलसिरी से मिलन कर, पूछी रघुपति बात ।
क्या तुमने देखा कही, प्रिय सीता का गात ॥३॥

सुन रुदन राम का मौलसिरी मुरझाई, सव पेडो के फल फूल गए अलसाई ।
फिर वोले लिपट लताओ से भगवाना, तुमको होगा मम सीता को वतलाना ॥
जव विटप वल्लरी से ना उत्तर पाया, तव पागल से हो आगे चरण वढ़ाया ।
उस समय राम की दशा वहुत थी म्लाना, थे विरह व्यथा से व्याकुल दुखी महाना ॥

डिगते पड़ते दौडते, धरे लखन का हाथ।
पशु पक्षी को पूछते, चले जात रघुनाथ ॥४॥

श्री रामचद्र की देख दशा दुखदाई, लक्ष्मण के मुख पर घोर उदासी छाई।
औ लगे लखनजी मन ही मन पछताने, श्री रामचद्र को धीरज लगे वधाने॥
पर राम सिया विन ऐसे हुए अधीरा, हो गरमी मे जैसे प्यासा विन नीरा।
विन सीता के श्री राम हो गये सूने, सीते कह सबको लगे पकडने छूने॥

जोर जोर से रामजी, सीते रहे पुकार।
स्वांस स्वांस के साथ में, सीते रहे उचार ॥५॥

हे मृगयी है तुमसी ही नैना वाली, क्या देखी तुमने सीता भोली भाली।
क्या सिंह कही तुमने देखी सीता को, तुमसी ही कटि पतली वाली भीता को॥
हे गज क्या तुमने देखी सिय भामिनी को, तुमसी ही चलने वाली गज गामिनी को।
जब पशुओ मे भी प्रत्युत्तर ना पाया, तब पक्षी कुल के सम्मुख दुख दर्शाया॥

तुम उड़ते आकाश मे, दसो दिशों स्वच्छद ॥
किधर गई सीता सखी, पूछा श्री रघुनंद ॥६॥

हे भ्रमरी तितली कोकिल काक कपोता, मे तुम्हरे सम्मुख अपना दुखडा रोता।
हो जहा कही भी सीता मुझे वताओ, मुझ विरही से अब अधिक न आप छिपाओ॥
नभचर भूचर जलचर से करते वातें, श्री राम सिया को ढूढत इत उत जाते।
हे सूर्य देव क्या तुमको देत दिखाई, हे पवन देव क्या तुमने सिय छू पाई॥

चलते चलते राम को, दिया सुनाई राम।
राम राम हे राम हे, राम राम हे राम ॥७॥

जब सुना राम ने रुक कर ध्यान लगाया, चल दिए उधर ही शब्द जिधर से आया।
है कौन जटायु हाय राम रो बोले, थे मरणासन्न जटायु मुख अध खोले ॥
झट दौड़ राम ने झुक कर उन्हे उठाया, ले कर गोदी मे छाती से चिपकाया।
फिर सहला सहला कर बोले रघुराई, हा हुआ तुम्हे क्या अरु आखे भर आई ॥

देख जटायु राम को, बोल सके ना वैन।
सांस सांस पर चल रहे, झर झर आंसू नैन ॥८॥

छटपटा जटायु ग्रीवा तनिक हिलायी, बोलन चाहत है पर ना बोला जाई।
दुख देख रो पडे राम लखन दोउ भ्राता, दुर्दशा तुम्हारी किसने की हे ताता ॥
बस नाम बतादो उस पिशाच का हमको, जिसने दीन्हा ऐसा दारुण दुख तुमको।
रुक रुक कर भक्त जटायु कीन्ह उच्चारण, जो सीता हर ले गया वही खल रा 'म' ॥

राम राम कह जटायु, दीन्ह प्राण को त्याग।
लखन लाल के हृदय में, लगी भयंकर आग ॥९॥

झट पडा धनुष पर हाथ लखन का जाकर, रो पडे राम निज गले गिद्ध लिपटा कर।
हो महाशोक मे लीन लखन रघुनदन, श्री भक्त जटायु लिए किया अति क्रंदन ॥
फिर बोले लक्ष्मण से रघुपति रघुराई, प्रिय तात जटायु ने गति उत्तम पाई।
जो गति देवो को भी दुर्लभ है भारी, वह मिली जटायु को मुक्ति अघहारी ॥

जितना सोच न सिया का, हुआ मुझे हे भ्रात ।
उससे कोटि गुणा अधिक, हुआ भक्त खो तात ॥१०॥

ये गिद्धराज थे मित्र पिता के अच्छे, मम भक्त सदाचारी सहयोगी सच्चे ।
थे महाबली योद्धा औ पर उपकारी, इनको खो कर दुख होता मुझको भारी ॥
जो अबला की रक्षा हित जीवन देते, वें सहज हि उत्तम लोक प्राप्त कर लेते ।
दे कर रण मे परनारी के हित प्राणा, कर लिया जटायु ने अपना कल्याणा ॥

रामचंद्रजी ने किया, अपने हाथो दाह ।
भक्त जटायु धन्य तुम, धन्य तुम्हारी राह ॥११॥

फिर खोजत सीता को दोनो रघुवंशी, पहुचे मतंग मुनि के आश्रम अवतंसी ।
रहते तहं पशु पक्षी सब वैर बिसारा, रखते आपस मे सब मिल भाई चारा ॥
फिर चले वहा से राम लखन दोउ भाई, पथ मे पर्वत पाताल कंदरा आई ।
तहं मिला विप्र द्रोही कवध एकाक्षी, केवल धड का राक्षस देने को साक्षी ॥

देखत ही रघुनाथ को, बोला रो कर जोर ।
भले पधारे राम हे, धन्य भाग है मोर ॥१२॥

बोले कवंध से रामचन्द्र भव भूपा, पाया तुमने कैसे यह विकृत रूपा ।
बोला कवध प्रभु सुनो लगा कर ध्याना, मैं था महान गंधर्व रूप की खाना ॥
मैं फिरता जग मे नाना रूप बना कर, यह रूप बनाकर विप्र डराया जा कर ।
दे दिया विप्र ने श्राप रहे यह रूपा, जब तक ना देखे रघुपति राम अनूपा ॥

विप्र द्रोह से हुई मम, दुर्गति अपरंपार।
चरण शरण हूँ आपके, करो शीघ्र उद्धार ॥१३॥

सुन वचन राम बोले विचार कर वाणी, मुझको ना भाता विप्र विमुख जग प्राणी।
जो करे विप्र से द्रोह नरक मे जावे, वह अधम कभी भी उत्तम गति ना पावे ॥
धन धान्य सभी हो जावे उसके नष्टा, हो जावे संतति नाश और पथ भ्रष्टा।
कर द्रोह विप्र से ना कोई सुख पाता, जीवन भर जलता मरने तक पछताता ॥

विप्र ब्रह्म का रूप है, पृथ्वी का भगवान।
वेद शास्त्र कहते सकल, गाता हूँ मै गान ॥१४॥

मैं करता विप्रो के चरणो का वन्दन, विप्रो की पदरज मम मस्तक का चन्दन।
है विप्र पूज्य सुर श्रेष्ठ ब्रह्म भू देवा, जिनके चरणो की मैं करता हूं सेवा ॥
ना विप्र बराबर जग मे कोई दूजा, मै करता विप्रो के चरणो की पूजा।
बिन विप्रो की आज्ञा मैं ना कुछ करता, उनके प्रसाद से ही धरणी को धरता ॥

जो खल पापी मूढ़ मति, करत विप्र से द्रोह।
सुख ना पाता स्वप्न में, नही सुहाता मोह ॥१५॥

सुन राम वचन राक्षस कवंध यो बोला, पलटो प्रभु झटपट इस जघन्य का चोला।
ना करूं विप्र से द्रोह सपथ खाता हूं, जो किया इसी पर पुनि पुनि पछताता हू ॥
कर दया दीन पर रघुवर राम दयाला, दे दी कवंध को मुक्ति महा कृपाला।
फिर कीन्ह वहा से आगे राम प्रयाणा, गौ विप्र साधु सतो के रक्षक प्राणा ॥

पम्पासर पश्चिम तटे, पहुंचे रघुपति जाय ।
वहां एक मन भावना, आश्रम दिया दिखाय ।।१६।।

दोनों भाई होकर आकर्षित धाए, शोभा निहारते पर्ण कुटिर पर आए ।
हैं कौन राम प्रभु आवो आवो आवो, करके पदार्पण सोए भाग्य जगावो ।।
पथ जोवत जोवत श्वेत हो गए केशा, गिन गिन कर दिन बीतत थे अब अवशेषा ।
सुन लक्ष्मण बोले भ्रात सियापति रामा, क्या जात तुम्हारी और नाम क्या कामा ।।

भिलनी मेरी जात है, शवरी मेरा नाम ।
स्वास स्वांस में राम को, रटना मेरा काम ।।१७।।

कर जोड चरण मे कर प्रणाम वह बोली, वृद्धा भक्ति की प्रेम मूर्ति शुचि भोली ।
लो बैठो इस आसन पर प्रभुवर आओ, लो बेर प्रेम के रुच रुच भोग लगाओ ।।
हैं सारे मीठे नही एक भी खट्टा, मैंने इनको चख चख कर किया इकट्ठा ।
थी अभिलाषा कब राम यहा आवेंगे, कब भक्ति भाव के मधुर बेर खावेंगे ।।

प्रेम भरे श्रद्धा सने, सुन शवरी के वैन ।
सीतापति रघुनाथ के, पड़ा हृदय में चैन ।।१८।।

बोले रघुनन्दन तपोधने हे शवरी, हे धर्म कर्म मे निरता पूता प्रवरी ।
तुम्हरी भक्ति से खिचा यहा मै आया, कर दर्शन तुम्हरे मैं महान सुख पाया ।।
तुमने की है नवधा भक्ति अति भारी, अति शुद्ध हृदय से व्रत तपनिष्ठा धारी ।
हो सफल मनोरथ सदा पुनीत तुम्हारा, है शुभाशीश वरदान अमोघ हमारा ।।

बड़े प्रेम से चाह से, विश्वंभर भगवान।
चखे बेर खाने लगे, हंस हंस कर मुस्कान ॥१९॥

लक्ष्मण जूठे फल खाते जब सकुचाए, तब रघुवर ने सकेतो से समझाये।
कर बड़ी तपस्या ऐसे मधुफल पाये, मैने तो ऐसे कभी नही सच खाये॥
चखो चखो खाओ खाओ हे भाई, बोले संकेतो से खाते रघुराई।
हैं अमृत जैसे मधुर स्नेह के सीचे, सुस्वादु सुगंधित खाओ आखे मीचे॥

ऐसे फल ना मिलेगे, इस जीवन में ओर।
पके प्रेम के रस भरे, चखे भक्ति के चोर ॥२०॥

सकेत समझ लक्ष्मण का मन ललचाया, तब उठा बेर इक छिपकर चुप से खाया।
खाते ही झट मु ह से निकला आहाहा, अरु करनै लगे प्रशंसा लक्ष्मण खा खा॥
श्री रामचन्द्रजी रुच रुच भोग लगावे, शबरी के चखे मधुर प्रेमफल खावे।
भगवान भाव के भूखे महा अनूठे, खा गए बेर भिलनी के सारे जूठे॥

भोग लगा भगवाग के, शबरी हो गई धन्य॥
भू पर ऐसा भक्ति का, उदाहरण ना अन्य ॥२१॥

करके शबरी भिलनी का प्रभु कल्याणा, सीता को खोजन किया तुरत प्रयाणा।
जब ऋष्यमूक पर्वत वन दीन्ह दिखाई, बोले लक्ष्मण से वचन राम रघुराई॥
इस पर्वत पर करता सुग्रीव निवासा, वह देगा हमको साथ मुझे विश्वासा।
चल उसे बना सहयोगी अपना मीता, खोजेंगे उसके द्वारा लक्ष्मण सीता॥

गिरीश रामायण

अध्याय १३

किष्किंधा काण्ड

●

राम लखन से आन कर, मिले महा हनुमान।
कर प्रणाम कर जोड़ के, महावीर बलवान ॥१॥

श्री रामचन्द्र से बोले श्री हनुमाना, है कौन आप तेजस्वी सूर्य समाना।
मत तनिक कीजिए शंका परिचय दीजे, सुग्रीव आपके योग्य मित्रता कीजे॥
क्यों हुआ आपका दुर्गम वन मे आना, सुग्रीव आपको चाहत मित्र बनाना।
मैं मन्त्री उनका पवन पुत्र हनुमाना, जैसा चाहूं मै रूप बनाऊं नाना॥

स्वामी मम सुग्रीव है, वानर राज महान्।
चल कर मेरे संग में, करो जान पहिचान ॥२॥

सुन भिक्षु वेशी हनुमान की वाणी, बोले लक्ष्मण से राम विश्व के त्राणी।
ना सुना कभी ऐसा सु दर सभाषण, धारा प्रवाह संस्कृत मे शुद्ध उच्चारण॥
सुग्रीव सचिव श्री पवन पुत्र हनुमाना, है वेद शास्त्र के ज्ञाता औ विद्वाना।
ऐसों का मिलना दुर्लभ जग मे भारी, वहं रहता मगल जहं ऐसे सुविचारी॥

दे परिचय हनुमान को, बोले राम विचार।
कथन आपका मैत्री का, है मुझको स्वीकार ॥३॥

सुन वचन राम के मुदित हुए हनुमंता, पाकर जिमि सत्संगति होते है सता।
फिर कर धारण निज रूप शरीर बढाया, श्री राम लखन को कंधो पर बैठाया॥
जा चढे शिखर पर पलक मारते जाकर, सुग्रीव हो गए प्रमुदित परिचय पाकर।
फिर कीन्ह राम का बहुत बहुत सत्कारा, होवे अटूट मैत्री यह वचन उचारा॥

कर में कर ले प्रेम से, राम और सुग्रीव।
अग्निदेव को साक्षि कर, मित्र बने एक जीव ॥४॥

श्री लखनलाल हनुमान बहुत हर्षाए, नभ मे देवो ने मंगल वाद्य बजाए।
श्री राम मित्र के लक्षरण लगे बताने, किसको कहते है मैत्री लगे सुनाने॥
है धर्म मित्र का दे संकट मे साथा, आवश्यकता पडने पर दे दे माथा।
ना करे मोह तन मन धन मान किसी का, अर्पण करदे सब मैत्री नाम इसी का॥

जहां पसीना मित्र का, गिरे वहां पर रक्त।
मित्र वही साथी वही, वही सखा अनुरक्त ॥५॥

जिस तरह दूध पानी हिल मिल घुल जाते, उस तरह परस्पर मित्र मित्र मिल जाते।
ना रहता उनमे भेद तनिक भी कोई, ना रहता जैसे हवा गंध मे कोई॥
ना मित्र लाभ बिन भाग्य किसी को होता, सत मित्र मित्र का भाग्य जगाता सोता।
फिर विविध भांति से श्री रघुपति रघुराई, की मित्र लाभ की अनुपम अमिट बडाई॥

उसी समय मे आगयी, श्री सीता की याद।
मुख सरोज मुरझा गया, मिटा मैत्री आल्हाद ॥६॥

लख राम दशा सुग्रीव हो गए व्याकुल, अरु कहा राम से होवो मत अब आकुल।
मिल जावेगी अब सीता पता लगाये, फिर वस्त्राभूषण ला सुग्रीव दिखाये॥
लख वस्त्राभूषण सीता के श्रीरामा, पा गये यथा श्री सीता को सुख धामा।
हो गया राम मे तत्क्षण ही परिवर्तन, हो गए प्रफुल्लित राम प्रभु के तन मन॥

फिर रघुवर के नैन से, निकसा झर झर नीर ।
सीता व्यथा वियोग की, जागी सोई पीर ॥७॥

दिखला कर पूछा 'लक्ष्मण से रघुनंदा, ये है न सिय के कुंडल बाजूबंदा ।
बतलाओ बोलो शीघ्र सुमित्रानंदन, यह जानन को कर रहा हृदय मम स्पदन ॥
बोले लक्ष्मणजी देख राम से वाणी, मैं नहीं चीनता इनको हे कल्याणी ।
ना देखे मैंने कभी सिया कर कर्णा, मैंने तो देखे है बस केवल चरणा ॥

हा है निश्चय ही यही, नूपुर उनके तात ।
इसमें किंचित भी नहीं, शका संशय भ्रात ॥८॥

सुन बात लखन की पुनि पुनि नुपुर निहारे, कहं मिले मित्र ये रघुवर वचन उचारे ।
एक दिन बैठे थे हम बोले सुग्रीवा, सुन राम राम हमने ऊंची की ग्रीवा ॥
सिय ने ऊपर से देख हमे ये डारा, अरु जोर जोर मे लक्ष्मण राम पुकारा ।
थी गोदी मे राक्षस के सीता माता, वह दिया दिखाई दक्षिण दिशि को जाता ॥

सुनते ही श्री राम के, नयनन ढलका नीर ।
हिचकी भर रोने लगे, होकर विकल अधीर ॥९॥

बोले सुग्रीवा चिंता तनिक न कीजे, कर सत्य प्रतिज्ञा कहता हूं सुन लीजे ।
मैं पृथ्वी नभ पाताल लोक जाऊंगा, औ खोज सिया का समाचार लाऊंगा ॥
मिथिलेश कुमारी सीता मिल जावेगी, खो शीघ्र आपकी मन पीड़ा जावेगी ।
है कौन जगत मे जो रख सकता सीता, धारो धीरज त्यागो संतापा मीता ॥

धर धीरज श्री राम ने, पूछा पा अवकाश।
किस कारण सुग्रीव तुम, करते यहां निवास ॥१०॥

बोला सुग्रीवा बाली मेरा भ्राता, बल पौरुप मे है अनुपम जग विख्याता।
उसने मुझको घर से निकाल दीन्हा है, मम प्राण प्रिया पत्नी को भी छीना है ॥
उसके डर से मैं यहा वास करता हू, हे सखे सत्य यह बात तुम्हे कहता हू ।
मैं हू बाली के भय से दुखी अनाथा, उपकार कीजिए मेरा हे रघुनाथा ॥

कर बाली का वध सखे, शीघ्र करूंगा त्राण।
इतना कह श्रीराम ने, छोड़ दिया इक बाण ॥११॥

वह बाण बीध कर साल वृक्ष सातो को, जड़ तना साख डाली डाली पातो को।
पर्वत पाताल छेद कर पृथ्वी सारी, आ गया लौट तरकस मे झट अरि हारी ॥
सुग्रीव देख कर चमत्कार चकराया, कर जोड राम के गुण गौरव को गाया।
फिर बोला रख चरणो मे अपना माथा, हो गया मुझे विश्वास आपका नाथा ॥

गज पुष्पी माला पहिन, किष्किधा मे जाय।
गर्ज गर्ज सुग्रीव ने, बाली दीन्ह जगाय ॥१२॥

ना जाओ स्वामी तारा ने समझाया, अन सुनी करी औ गर्ज तर्ज कर आया।
सुग्रीव देख कर कीन्हा बाली क्रोधा, भिड गए परस्पर दोनो भाई योद्धा ॥
फिर हुआ द्व द्व दोनो मे पटक पछाड़ा, तब राम बाण ने बाली का तन फाडा।
फिर निकल लता वृक्षो से श्री रघुराई, पहुचे घायल बाली के सम्मुख जाई ॥

बाली बोला आप तो, है समदर्शी नाथ।
घात किया क्यों आपने, छिपकर मेरे साथ ॥१३॥

होकर क्षत्री औ वेद धर्म के ज्ञाता, क्यो कपट नीति से कीन्हा मेरा घाता।
मम निरपराध सग अनुचित कीन्ह अधर्मा, रघुवशी के यह नही योग्य था कर्मा॥
बोले रघुनायक सुनो लगा कर ध्याना, है धर्म कर्म का तनिक न तुमको ज्ञाना।
यदि होता तो तुम लघु भ्राता की नारी, रखते क्यो घर मे उत्तर दो कुविचारी॥

भूल हुई करदो क्षमा, कीन्ह भयंकर पाप॥
बाली बोला भक्ति से, चरण शरण दो आप ॥१४॥

प्रभु पुलकित हो बाली को कठ लगाया, कर मुक्त पाप से निज सुख धाम पठाया।
बाली के राज्यासन सुग्रीव बिठाया, अ ंगद को उनका प्रिय युवराज बनाया॥
दिन बीते महिने बीत वर्ष भी बीता, सुग्रीव राज्य पा खोजन भूला सीता।
तब याद दिलाने प्रभु ने लखन पठाये, क्रोधित लक्ष्मणजी पंपापुर को धाये॥

अ ंत.पुर में पहुँच कर, दीन्ह लखन धिक्कार।
तारा और सुग्रीव ने, भूल करी स्वीकार ॥१५॥

सुग्रीव सोच कर बोले हे हनुमाना, पृथ्वी के सारे बानर शीघ्र बुलाना।
कहते ही वानर होने लगे इकट्ठे, अनगिनत अनता आज्ञाकारी पट्ठे॥
आज्ञा पा पा सीता खोजन सब धाये, भूमडल पर मानो तारागरण छाये।
फिर बोले रघुवर निकट बुला हनुमाना, तुम हो कपीश हे महावीर बलवाना ॥

करुणा कर हनुमान से, बोले जगपति राम ।
तुमसे होगा सिद्ध मम, सिय खोजन का काम ॥१६॥

तुम वेग तेज गति बल सब गुण के धामा, अस कौन जगत मे करन सको तुम कामा ।
तुम नीति शास्त्र औ देश काल के ज्ञाता, अस कौन स्थान जहं तुमसे गया न जाता ॥
ना भूमडल पर तुम सम वीर महाना, जाओ खोजो सीता को हे हनुमाना ।
फिर भर आखो मे नीर अंगूठी देकर, बोले सीता को दे आओ सुध लेकर ॥

कह देना मुझ राम को, तुम बिन ना पल चैन ।
आगे फिर श्री रामजी, बोल सके ना वैन ॥१७॥

अंजनि सुत अंजलि मे मुंदरी ले लीन्ही, हृत आख शीश से छू मुंह मे धर लीन्ही ।
फिर पकड चरण रघुवर के शीश झुकाया, कर धर सर पर रघुवर ने अभय बनाया ॥
फिर चले हृदय मे धरे राम का ध्याना, संग जामवंत अंगद को ले हनुमाना ।
हो गए अनेकों वानर हनुमत साथा, सब झुका झुका कर राम चरण मे माथा ॥

खोजत हनुमत सिया को, घुसे गुहा मे जाय ।
स्वयप्रभा दीन्हा उन्हे, सागर तट पहुँचाय ॥१८॥

ना मिला सिया का पता खोज जग डारा, जगल पहाड़ पाताल सिधु नभ सारा ।
बीतन आया इक मास सभी अकुलाये, कैसे लौटे बिन सिय का पता लगाए ॥
क्या बोल दिखावें मुख रघुवर को जाकर, अनशन कर बैठे सभी शपथ को खाकर ।
इतने ही मे संपाति निकल कर आये, कंदरा मे वाहर खाने को मुंह बाये ॥

कपि करते थे उस समय, सिया राम की बात।
सुन कर बोले तुरत ही, वृद्ध जटायू भ्रात ॥१६॥

जिसने सीता हर भ्रात जटायू मारा, उसका तुमको मै भेद बताऊ सारा।
वह राक्षस रावण है लंका का राजा, खोजो सिय को जा वही पूर्ण हो काजा ॥
कह कर संपाति उडे तुरत आकाशा, सीता मिलने की बधी सबो मे आशा।
कपि लगे गर्जने और कूदने सारे, पर हनुमानजी बैठे बात विचारे ॥

लंका कैसे जाय अब, सिधु लाघ कर पार।
विकट समस्या सामने, थी यह एक अपार ॥२०॥

तब जामवत बोले हनुमत से ऐसे, हे महावीर तुम चुप बैठे हो कैसे।
आ गया समय शुभ करो काम जो करना, तुम करो हृदय मे किसी बात का डरना ॥
तुम्हरे सम्मुख है सागर बू द समाना, तुम पवन पुत्र हो तुम्ह्रा वेग महाना।
यह तो समुद्र है केवल सौ योजन का, तुम हो असीम ना पार तुम्हारे तन का ॥

सीता दर्शन के लिए, हर्षित पवन कुमार।
लगे बढ़ाने अंग को, जिसका अंत न पार ॥२१॥

चढ कर महेद्र पर्वत के शिखर महाना, गर्जन कर बोले महावीर हनुमाना।
श्री राम कृपा से पल भर मे जाता हूं, सीता माता के दर्शन कर आता हूं ॥
सुन लगे सभी वानर महान हर्षाने, अरु लगे देवता दिव्य पुष्प बरसाने।
जब लगे अंजनीलाल छलाग लगाने, तब लगे देवता मंगल वाद्य बजाने ॥

गिरीश रामायण

अध्याय १४

सुन्दर काण्ड

●

जय जय श्री हनुमान से, गूंज गया आकाश ।
जब छलांग मारी महा, वीर राम के दास ॥१॥

हिल उठे सिंधु आकाश भूमि गिरि सारे, मारी छलाग जब पवन पुत्र प्रभु प्यारे ।
हो गये पलक भपते ही भट वे ओझल, ना दिए दिखायी मची हवा मे हलचल ॥
मैनाक निकल विश्राम कराने आया, राक्षसि रूपी सुरसा ने आ मुंह वाया ।
तब हनुमत ने दस योजन अग वढाया, सुरसा ने उनसे दूना मुंह फैलाया ॥

सुरसा बोली ध्यान से, सुनो बात हनुमान ।
मुझे बीच में लांघ कर, सके न कोई जान ॥२॥

मुझको ब्रह्माजी का ऐसा ही वर है, ना जा सकता मुझसे कोई वच कर है ।
हे हनुमान मेरे मुंह मे आ जाओ, फिर हो शक्ति तो मुझसे वच कर जावो ॥
तब हनुमानजी छोटा रूप बना कर, बाहर भट आये उसके मु ह मे जा कर ।
बोले कपीश कर वर सच्चा जाता हूं, लका मे सिय को खोज खबर लाता हूं ॥

धाये हनुमत वेग से, कर यह बाधा पार ।
दूजी बाधा आ गई, भीषण अपरंपार ॥३॥

सिंहकी ने पकड़ी हनुमत की छाया को, हनुमत ने की अपनी विराट काया को ।
सिंहकी दैत्या थी महा भयंकर भारी, विकराल राक्षसी अद्भुत कारी कारी ॥
फैलाया उसने मुख को नभ पाताला, सूक्ष्म बन मुख मे गिरे अंजनि लाला ।
करके सिंहकी का वध हनुमाना धाए, कर शंखनाद सुमनो को सुर वरसाए ॥

उसी समय आकाश से, वाणी हुई महान ।
धन्य धन्य हे पवन सुत, राम दूत हनुमान ।।४।।

कपिवर तुमने यह बड़ा काम कर दीन्हा, पापिन सिहकी हिंसा का जो वध कीन्हा ।
नभचर जलचर नित ही देंगे आशीशा, ने नाम आपका झुका आपको शीशा ।।
जिसमे होवे बल बुद्धि आप समाना, उसको ना जग मे कठिन सफलता पाना ।
होवे दिन प्रतिदिन यश वैभव की वृद्धि, होवे दिन प्रतिदिन सकल कामना सिद्धि ।।

झट से लंका आगई, देख जिसे हनुमान ।
पृथ्वी पर रख पाव को, हर्षित हुए महान ।।५।।

पहुचे लंका के निकट पवन सुत जाई, देखा ऊंचा परकोटा चौडी खाई ।
प्रहरी प्रचड राक्षस भाले धनुधारी, देते पहरा जिनकी संख्या बहु भारी ।।
थे बने हुए दृढ दस दिशि मे दस द्वारा, कर सके न जिनको सहजहि कोई पारा ।
करने लंका नगरी मे प्रथम प्रवेशा, श्री राम सुमर धारा सूक्ष्म कपि भेषा ।।

चुपके छिपके उछल कर, इधर उधर रख ध्यान ।
लंका मे करने लगे, जब प्रवेश हनुमान ।।६।।

आ खडी सामने विकट रूपिनी लका, बाधा विशाल देखी सन्मुख रण बंका ।
बोली तू वानर अरे कहा से आया, लंका नगरी मे कस प्रवेश कर पाया ।।
कैसे लाघा इतने विराट सागर को, खाई परकोटा प्रहरी सेना घर को ।
कर सकती जहा न चिडिया कभी प्रवेशा, यह लंका नगरी है रावण का देशा ।।

सुन लंका के वचन को, बोले श्री हनुमान ।
मैं आया देखन यहां, हरे भरे उद्यान ॥७॥

मत रोको मेरी राह मुझे जाने दो, लंका नगरी को देख मुझे आने दो ।
बोली लंका जा चला यहा से झट तूं, मत कर मेरे सन्मुख वानर तू चूं चूं ॥
बोले हनुमत मैं जाकर फल खाऊंगा, बिन फल खाये मैं कभी नही जाऊंगा ।
तब लका क्रोधित होकर मुष्ठिक मारी, तब हुए महा क्रोधित कपीश बलधारी ॥

मारी मुष्ठिक तान के, महावीर हनुमान ।
लका मूर्छित हो तुरत, पड़ी पहाड़ समान ॥८॥

त्रिकूट गिरि के शिखर पहुच हनुमाना, पुष्पक विमान पर जा बैठे बलवाना ।
था समय रात का फिर भी दिन सा लगता, कोना कोना लंका का जगमग जगता ॥
थी लंका रमणीया सोने की सारी, रत्नो से चित्रित चमके सभी अटारी ।
थे फल फूलो से लदे विशाल बगीचे, सुन्दर रंगो के मानो बिछे गलीचे ॥

सीता खोजत पुरी में, इत उत श्री हनुमाना ।
रावण के प्रासाद मे, पहुँचे वीर महान ॥९॥

थी वहा अनेको सुन्दर सुन्दर नारी, पहिने अनेक वस्त्राभूषण मनहारी ।
कोई नाचे कोई मुस्काये गावे, कोई मृदंग वीणा सहतार बजावे ॥
कोई झूले कोई करती मधु पाना, रंग रूप बनाये अनुपम मोहक नाना ।
क्रीडा करता था उनसे राक्षस राजा, रावण मदाध तेजस्वी तज कर लाजा ॥

बहुत लगन से खोज कर, देखा श्री हनुमान ।
पर न दिखायी दो सिया, मगल मूर्ति महान ॥१०॥

तब हुए पवन सुत चिंतित और उदासा, सीता मिलने की क्षीण हो गई आशा ।
कुछ क्षण बीता फिर कर विचार दृढ मन मे, उत्साह नया लेकर उमंग नव तन मे ॥
फिर से लंका का कोना कोना छाना, पर मिली न सीता खोज थके हनुमाना ।
इतने ही मे धीमी धीमी कुछ वाणी, सुन आकर्षित हनुमान हुए जग त्राणी ॥

धीरे धोरे जप रहा, था कोई श्री राम ।
लका में यह कौन है, रावण से जो वाम ॥११॥

कर बडा अचभा पवन पुत्र तहं धाए, सुन राम राम का मधुर मत्र मुस्काए ।
राक्षस नगरी मे राम नाम का प्यासा, करता कैसे यह निर्भय भक्त निवासा ॥
जा निकट कपीशा देखा उस व्यक्ति को, रावण की लंका मे अनुपम शक्ति को ।
कर सके न कोई कभी कल्पना जिसकी, कर सत्य दिखायी धन्य भावना इसकी ॥

तूफानो मे दीप ज्यो, जल कर करे प्रकाश ।
सिहो मे मृग वत्स ज्यो, खेले करे निवास ॥१२॥

तब राम भक्त मिलने की मन मे आई, जा मिले विप्र का भेष कपीश बनाई ।
अरु किया प्रेम से राम राम हनुमाना, था कभी न व्यक्ति को जिसका अनुमाना ॥
झट उठा अचभा करके दौडा आया, कर राम राम चरणो मे शीश झुकाया ।
फिर मिले हृदय से खुल कर परिचय दीन्हा, सत्कार एक का एक हृदय मे कीन्हा ॥

मिले राम के भक्त दो, विभीषण हनुमंत।
सागर उमड़ा स्नेह का, जिसका पार न अंत ॥१३॥

दोनो ने मिल रघुवर के यश को गाया, होती जिससे निर्मल वाणी मन काया।
जिसके गाने से सकल सिद्धि होती है, जिसकी गाथा सब पापो को धोती है॥
जिस प्राणी ने श्रीराम नाम यश गाया, उसने अपना सोया सौभाग्य जगाया।
श्रीराम कथा मे अमृत नद लहराता, पीता वह अमृत जो हरि के गुण गाता॥

प्रीति करता राम से, जो नर देही पाय।
सफल जन्म उस जीव का, लीन्ह परम पद पाय॥१४॥

जब बीत रात सूर्योदय होने आया, लंका नगरी का सारा भेद बताया।
पा भेद विभीषण से हनुमाना धाए, ले राम नाम अति सूक्ष्म रूप बनाए॥
थी अद्भुत एक अशोक वाटिका न्यारी, जा पहुचे झट तहं रामदूत बलधारी।
देखी नारी इक तरु अशोक के नीचे, थी ध्यान मग्न वह अतिशय आखे मीचे॥

देख उसे हनुमानजी, मन में कीन्ही बात।
यह कृश तनु वाली कही, होय न सीता मात॥१५॥

थी दुर्बल पीडित मैली अति कृश काया, आखे आसू भीगी मुखडा मुरझाया।
वर्णाकृति लख अरु लगा विविध अनुमाना, पीली साडी पहिने सिय को पहिचाना॥
थी लट उलझी इक वेणी नाग समाना, हर्षित हो रोये देख उन्हें हनुमाना।
फिर ले सीता माता का मन मे नामा, कीन्हा कपीश ने भक्ति सहित प्रणामा॥

इतने ही में आ गया, रावण महा कराल।
शांत वाटिका में मनो, आया हो भूचाल ॥१६॥

थी सग दैत्य के सेवा हित सौ नारी, बोला सीता से वाणी बिना विचारी।
कर कृपा प्रिया टुक मेरी ओर निहारो, शृंगार करो नव वस्त्राभूषण धारो ॥
चल कर महलो मे मम संग करो निवासा, क्यो करती हो जीवन का सत्यानाशा।
तुम मानो मेरी बात समझ सब जाओ, छोडो अनशन औ इच्छा हो सो खाओ ॥

सुन कर श्री हनुमान के, उठा हृदय मे क्रोध।
तानी मुष्ठि मारने, रुके तुरत कर बोध ॥१७॥

बिन देखे ले तृण ओट सियाजी बोली, रे अधम दुष्ट पापी तेरी मति डोली।
मैं इस जीवन मे मुख ना देखू तेरा, कहना तुझको है अ तिम बस यह मेरा ॥
क्रोधित रावण कुछ आगे पाव बढा कर, आखे निकाल बोला फिर भोह चढा कर।
क्या नही जानती मुझको तू री नारी, जो बोल रही है ऐसी मु ह से खारी ॥

बोली सीता जानती, तुम सम नीच न और।
कपटी क्रोधी अधर्मी, पापी डाकू चोर ॥१८॥

जो हर कर घर पर लाए हो पर नारी, ना आई तुमको लाज बडे बल धारी।
लाते मुझको श्रीराम लखन के सम्मुख, तब तुम्हे जानती वीर निशाचर दशमुख ॥
अब भी चेतो तज पाप धर्म को धारो, लौटादो मुझको राम समीप सिधारो।
लो माग क्षमा श्री राम चरण मे पड कर, वे है शरणागत वत्सल बड़े दया धर ॥

क्षमा मांगलो राम से, जो चाहो कल्याण ।
रावण नहिं तो हरेंगे, राम बाण तव प्राण ॥१६॥

सुन तमका रावण क्रोधित हो झल्लाया, औ विविध भांति से सीता को धमकाया।
बोला क्या है री चीज राम मम सम्मुख, मैं बीस बाहु राक्षस महाराजा दसमुख ॥
मैं चिमटी से चट मसल राम को मारू', मैं पलक मारते महा प्रलय कर डारु ।
सुर असुर दैत्य दानव सब मेरे दासा, मेरे सम्मुख है कंकर गिरि कैलाशा ॥

छोड़ राम के नाम को, छोड़ राम के गीत ।
जीना चाहती है यदि, कर मेरे संग प्रीत ॥२०॥

बोली रावण से पीठ फेर कर सीता, रे राम विमुख जा चला यहा से जीता ।
यदि नही यहा से तू झटपट जावेगा, तो मेरे निश्वासो से जल जावेगा ॥
कडका रावण बस रहने दे री सीता, मम बात मान यदि रहना चाहे जीता ।
दो महिनो मे यदि पति ना माने मुझको, तो खाजाऊंगा टुकडे कर कर तुझको ॥

जाता हूँ मैं इस समय, लेना खूब विचार ।
क्रोधित हो रावण गया, कर भीषण फुत्कार ॥२१॥

पहुचाने रावण को राक्षसि गई सबही, रह गई अकेली सीता केवल जब ही ।
अवसर पा कर हनुमत ने मुंदरी डारी, पा जिसको सीता हुई असीम सुखारी ॥
पहिचानी मुंदरी राम नाम से अंकित, फिर हुई सिया रोमांचित हर्षित कंपित ।
करके प्रणाम बोले झट श्री हनुमाना, मत करो सोच मा। राम दूत मैं आना ॥

गिरीश रामायण

अध्याय १५

सुन्दर काण्ड

•

सीता बोली स्नेह से, आए कैसे तात।
लांघ विराट समुद्र को, इतना छोटा गात ॥१॥

सुन सीता मा के वचन महा बलधारी, कर जोड़ नम्र हो ऐसी गिरा उचारी।
श्रीराम कृपा से यह छोटी सी बाता, मैं उठा भूमि को लूं ऊगली पर माता ॥
तुम कहो मात तो लंका को ले जाऊ, ले जाकर राम चरण पर इसे चढाऊं।
आज्ञा दो तो रावण राक्षस को मारूं, लंका नगरी को छार छार कर डारूं ॥

राम कृपा से जगत में, कठिन कोउ ना काम।
सहज सरल उनको सकल, जिनके मन में राम ॥२॥

ना राम कृपा से बडी वस्तु है कोई, विन बडे भाग्य के राम कृपा ना होई।
ना राम भक्ति से बडी जगत मे माता, ना राम कथा से बड़ी जगत मे गाथा ॥
हर्षित हो हनुमत लगे राम यश गाने, अमृत की नदिया मुख से लगे बहाने।
सुन राम नाम का सकीर्तन श्री सीता, दुख भूल गई सारा वियोग का बीता ॥

राम नाम पीड़ा हरे, पातक हरे महान।
सुने सुनावे स्नेह से, ध्यान लगा कर कान ॥३॥

छोटे से वानर के मुंह से सुन कर बाता, हो गई चकित औ शंकित सीता माता।
बोली तुम छलिया हो राक्षस मायावी, विश्वास नही होता है तुम पर भाई ॥
क्या कहती हो मा बोले श्री हनुमाना, मैं राम दूत अंजनि सुत हूं बलवाना।
बैठो मेरे कंधे पर मा ले जाऊ, श्री राम लखन से अभी तुरन्त मिलाऊं ॥

मात दूत में राम का, राम चरण का दास ।
सत्य सपथ खा कह रहा, करो आप विश्वास ।।४।।

कह कर अपना हनुमत ने रूप दिखाया, मेरू पर्वत सम महा विराट बढाया ।
हो गए नेत्र तेजस्वी जैसे भाना, सारा शरीर अग्नि प्रज्वलित समाना ।।
नख विजली सम बन गए वज्र सम दंता, हो गए ताम्र सम तपे लाल हनुमन्ता ।
त्रय लोक दिखे मुख मे जब लीन्ह जभाई, औ रोम रोम मे दीन्हे राम दिखाई ।।

रूप देख हनुमान का, तेज विराट महान ।
डर कर बोली सियाजी, बस बस बस हनुमान ।।५।।

हो गया मुझे सच्चा विश्वास तुम्हारा, कपि शीघ्र सुनावो राम सदेशा प्यारा ।
तब हनुमत ने फिर सुक्ष्म रूप बनाया, औ बडे स्नेह से राम संदेश सुनाया ।।
हैं राम लखन के सहित स्वस्थ्य औ सुखिया, पर बिना आपके हैं वियोग मे दुखिया ।
ले कपि सेना को राम शीघ्र आवेंगे, कर रावण वघ मा तुम को ले जावेंगे ।।

विना आपके राम को, है ना पल भर चैन ।
स्वांस स्वांस में सिय रटे, निर्झर बन रहे नैन ।।६।।

सुन कर कपीश की बात सियाजी रोई, श्री राम दर्श हो करो शीघ्र ही सोई ।
ना ले सकती हू सास एक भी उन बिन, जीवन की ज्योति बुझी जात है छिन छिन ।।
ना लिया अन्न औ जल है मुख मे आकर, कपि श्रेष्ठ संदेशा कह देना यह जाकर ।
कह देना मिलना हो तो वेग पधारो, डूबत नैया को करुणा करो उबारो ।।

नीन्द न आवे रात को, दिन ना तनिक सुहाय ।
जीवित हूँ बस राम के, दर्शन आश लगाय ॥७॥

सहनानी मे यह चूडामणि दे देना, श्री चरणो मे मम कोटि नमन कह देना।
कह मात सियाजी आसू लगी बहाने, हनुमत भी दुख मे लगे अश्रु टपकाने ॥
दोनो के मुख पर मौन उदासी छाई, बिछुडन ना चाहे हनुमत सीता माई।
मिल कर हनुमत दुख सुख के तनिक क्षणो मे, करके प्रणाम सीता के श्री चरणो मे ॥

बोले हनुमत दीन हो, झुका चरण में शीश ।
जाने की मां दीजिए, आज्ञा औ आशीश ॥८॥

सुन निकल पडा सिय की आँखो से पानी, ना बोल सकी अवरुद्ध हो गई वाणी।
फिर गद् गद् होकर बोली अच्छा जावो, लेकर रघुनन्दन को झट पट पुनि आवो ॥
हे हनुमान तुम को मेरी आशीशा, तुम अजर अमर जग तुम्हे झुकावे शीशा।
हे हनुमान जो तुमरे गुण गावेगा, वह धर्म अर्थ औ काम मोक्ष पावेगा ॥

नाम तुम्हारा नेह से, जो लेगा हनुमान ।
पावेगा वह विश्व मे, बल वैभव मति मान ॥९॥

लेकर आज्ञा श्रीहनुमान जी धाए, वाटिकाशोक के कन्द मूल फल खाए।
करने रावण के बल की सैन्य परीक्षा, फेंके उखाड प्रमदा वन के सब वृक्षा ॥
कर दिया भवन खंडहर तडाग मथ डाले, दौडे अशोक वन के राक्षस रखवारे।
जाकर रावण राजा के सम्मुख सारे, रोते डरते कर जोड़ विनीत पुकारे ॥

महाराज एक कपि ने, कीन्ह वाटिका ध्वंस ।
फल फूलो औ पेड़ का, छोड़ा तनिक न अंस ॥१०॥

हैं, क्या कहते हो कडक तेज विजली सा, पकडो उसको लावो बोला दस शीशा ।
अस्सी हजार किंकर राक्षस सुन धाए, श्री हनुमान ने सबको मार गिराए ॥
सुन कर क्रोधित हो रावण वहु झल्लाया, अक्षय कुमार को सेना सहित पठाया ।
अक्षय कुमार को पकड घुमा हनुमन्ता, पटका पछाड़ पृथ्वी पर पल में हन्ता ॥

सुन कर वध निज पुत्र का, करके शोक रिसाय ।
इन्द्रजीत को तुरत ही, रावण दीन्ह पठाय ॥११॥

देखा हनुमत ने इन्द्रजीत को आया, कर युद्ध और मुर्छित तत्काल गिराया ।
जव इन्द्रजीत को हुवा चेत तव धाया, हनुमत के ऊपर ब्रह्मा अस्त्र चलाया ॥
रखने ब्रह्मा जी का प्रभाव सम्माना, गिर पडे धरणि पर महावीर हनुमाना ।
डरते डरते राक्षस उनके ढिग आए, अरु वाध रस्सियो से कटि वध लगाए ॥

स्वेच्छा से वंदी वने, हनुमान हर्षाय ।
रावण के दरवार में, पहुँचे सम्मुख जाय ॥१२॥

जव देखा रावण ने वानर वलवाना, भूरी आखो वाला महान हनुमाना ।
तव आशका से रावण का हृत-डोला, सच वोलो हो तुम कौन गर्ज कर वोला ॥
मैं रामदूत हूं वोले हनुमत वीरा, तेजस्वी निर्भय महाधीर गंभीरा ।
सुन कर रावण के लगा हृदय मे धक्का, रह गया देख हनुमत को हक्का वक्का ॥

क्यों आये तुम यहां पर, बोला करके क्रोध ।
यह रावण की पुरी है, क्या तुमको ना बोध ।।१३।।

क्या नही जानते हो तुम मेरा नामा, जो आए हो बन दूत राम के कामा ।
सुन रावण के ये वाक्य वीर हनुमाना, बोले हे रावण छोड़ो तुम अभिमाना ।।
मैं जानत हूं तुम योद्धा महाबली हो, बहु नीति निपुण पंडित कूटज्ञ छली हो ।
ना सुर असुरो मे तुमसे अन्य महाना, तुम हो अवध्य सुर असुरो से जग जाना ।।

तुम सम और न विश्व में, यदि मानो मम बात ।
धारण करलो धर्म को, पर दारा को मात ।।१४।।

तुम जपो प्रेम से राम नाम की माला, जिससे होवे तम दूर उदय उजियाला ।
श्रीराम नाम है अनुपम नाम महाना, ना जग मे दूजा कोई राम समाना ।।
तुम करो राम की सेवा पूजा भक्ति, बल बुद्धि विद्या बढे दिनो दिन शक्ति ।
सुर असुर नाग गंधर्व सिद्ध विद्याधर, किन्नर पशु पक्षी ब्रह्मा विष्णु शकर ।।

सब रटते श्री राम को, जीव जंतु घट प्राण ।
तूं भी रट श्रीराम को, जो चाहे कल्याण ।।१५।।

हे राक्षस राजा पाप पंथ को त्यागो, मैं आया तुम्हे जगाने रावण जागो ।
हो जाओ मेरे सग सिया को लेकर, हो जाओ निर्भय मुक्त राम को देकर ।।
श्रीराम चरण मे पड़ करके लंकेशा, करलो रक्षित निज प्राण कुटुम्ब स्वदेशा ।
तीनों लोको कालो मे यह शुभकारी, हे रावण तव हित मे जय मंगल कारी ।।

नीति धर्म की बात को, कह कर श्री हनुमान।
रावण की सब सभा का, खेच लिया झट ध्यान ॥१६॥

श्री हनुमान का अत्युत्तम उपदेशा, ना लगा दशानन को अच्छा लव लेशा।
जब पाप प्रबल होता है मति सोती है, क्षय नाश काल विपरीत बुद्धि होती है ॥
आखे तरेर क्रोधित हो यम के जैसा, हो खड़ा सिंहासन से बोला लंकेशा।
इस वानर को झटपट से वध कर डालो, टुकडे टुकडे कर कर सब राक्षस खालो ॥

उठे विभीषण जोड़ कर, बोले राक्षस राज।
वध करना है दूत को, अनुचित निंदित काज ॥१७॥

जच गया विभीषण का रावण को कथना, बोला रहने दो करो दूत का वध ना।
जितनी जल्दी हो इसकी पूंछ जलादो, लंका आने का इसको मजा चखादो ॥
रूई कपडा औ तेल निशाचर लाये, जब लगे लपेटन हनुमत पूछ बढाये।
सारी लंका का कपडा रूई तैला, ला ला कर सभी लपेटा और उ ढेला ॥

फिर भी अंत न पूंछ का, पाया तब झुंझलाय।
राक्षस सारे क्रोध कर, दीन्ही आग लगाय ॥१८॥

कूदे उछले गरजे हर्षित हनुमाना, प्रत्यक्ष दिखायी दिए अग्नि औ भाना।
घर महल वगीचे गढ परकोटे सारे, सारी लंका के जला राख कर डारे ॥
जलते रोते राक्षस कर हाहाकारा, दौड़े भागे सब छोड़ छोड़ घर द्वारा।
रावण मदोदरि मेघनाथ घबराये, बस बचा विभीषण का घर वे सुख पाये ॥

कर कपीश लंका दहन, सिय मिल पूंछ बुझाय।
मार छलांग समुद्र पै, पहुँच दल में आय ॥१९॥

हर्षित हो वानर लगे उछलने सारे, जय महावीर की मिल कर सभी उचारे।
होकर प्रसन्न उत्सुक घेरा हनुमाना, अरु लगे पूछने बात लंक की नाना॥
किस तरह वहा पहुचे औ क्या कर आये, हनुमत ने हस कर सब वृतात सुनाये।
सब हो उत्साही मगन वहा से धाये, श्री जाववान सम्मति से मधुवन आये॥

मधुवन का उपभोग कर, किष्किंधा में जाय।
जय जय श्री हनुमान की, दीन्ही सभी लगाय ॥२०॥

जब सुनी राम ने जय जय श्री हनुमाना, जय जय अंजनि सुत पवन पुत्र बलवाना।
तब हो प्रसन्न बोले लक्ष्मण से ताता, देता वानर दल कार्य सिद्धि कर आता॥
इतने ही मे दौडे सुग्रीवा आये, हनुमत के आने का संदेश सुनाये।
आ पहुचे इतने ही मे पवन कुमारा, जय हनुमान से गूंज गया नभ सारा॥

रामचन्द्र के चरण में, कर साष्टांग प्रणाम।
हनुमत बोले जोर से, जय जय सीताराम ॥२१॥

फिर सीता मा का सब वृतात सुनाया, सुन कर जिसको सबके मन मे सुख छाया।
फिर सीता मां की चूडामणि दे दीन्ही, श्री रामचंद्र ने देख उसे चट चिन्ही॥
बोले हनुमत को लगा हृदय से रामा, कीन्हां तुमने उपकार अमित मम कामा।
हे हनुमान जो तुमको नित ध्यावेगा, वह अष्ठ सिद्धि नव निधि जय सुख पावेगा॥

गिरीश रामायण

अध्याय १६

लंका काण्ड

राम लखन हनुमान जी, जांववन्त सुग्रीव।
लंका पर चढ कर चले, अंगद औ नल नील ॥१॥

संग मे वानर सेना का कटक महाना, रंग रूप जिन्हो का लाल पीत औ श्यामा।
टिड्डी दल सा वह उछल कूदता उडता, जा रहा वादलो सा दल उमड़ घुमडता ॥
उल्कामुख द्विविद वृषभ सुखेण अनंगा, सुहोत्र शरारि गज गवाक्ष सव संगा।
जयनाद गर्जना करते वानर सारे, जाकर समुद्र के पहुंचे तुरत किनारे ॥

राम लखन दल वल सहित, करते युद्ध उछाव।
तट समुद्र के पहुँच कर, दीन्हा डाल पड़ाव ॥२॥

उस ओर दशानन मन ही मन, घवराया निश्चय करके मंत्री मंडल वुलवाया।
कर सभा इकट्ठी निज विचार देने को, कर गुप्त मंत्रणा परामर्श लेने को ॥
सवने रावण की हा मे हा हि मिलाई, श्रीराम सैन्य से लड़ने की ठहराई।
तव वोला हितकर वीर वीभीषण वाचा, रावण का भाई मेघनाद का चाचा ॥

जिस कारण से बन गया, रूप युद्ध का तात।
उस कारण को मेटिए, मानो मेरी बात ॥३॥

जल्दी से जल्दी सीता लौटा दीजे, मत वैठे सोये मोल विपत्ति लीजे।
ना युद्ध कभी होता है भ्राता अच्छा, मानो मेरा यह वाक्य यथार्थ सच्चा ॥
होती युद्धो से महा भयंकर हानि, ना वात युद्ध की मुंह से कभी वनानी।
क्यो तुच्छ वात के लिए युद्ध करते हो, क्यो कूद यज्ञ की ज्वाला मे पड़ते हो ॥

आप महा विद्वान है, हे लंका के नाथ।
सीता लौटा मित्रता, करो राम के साथ ॥४॥

सुन वीर विभीषण की बातें लंकेशा, बोला क्रोधित होकर अत्यंत विशेषा।
मत बोल विभीषण चुप रह महा विधर्मी, ना आती तुझको बात सभा मे करनी ॥
लौटा दू' सीता को मैं जीवित रहते, ना आई तुझको लाज सभा मे कहते।
बस सावधान आगे ऐसा मत कहना, यदि तुमको मेरी लंका मे है रहना ॥

लंका में मुझको नही, रहने की है चाह।
जो होगी सच्ची वही, बतलाऊंगा राह ॥५॥

हित की कहने मे होता मुझको खेद न, मै धर्म नीति युत करता नम्र निवेदन।
सच्ची कहने मे मंत्री सब सकुचाते, विपरीत आपके जाने मे डर पाते ॥
पर मैं शुभकारी बात सदा कहता हू', इसलिए सदा ही संकट को सहता हू'।
फिर कहता हू' एक बार सीख मम मानो, श्री रामचन्द्र से युद्ध कभी मत ठानो ॥

हो जावेंगे नष्ट हम, लंका बंधु समेत।
अभी समय है कीजिए, हे लंकापति चेत ॥६॥

सुन वीर विभीषण की रावण सब बातें, बोला क्रोधित हो पटक पृथ्वी पर लातें।
डरपोक कही का करता बात निरर्थक, रे वंश विरोधी वैरी राम समर्थक ॥
बस अभी यहा से निकल विभीषण जाओ, ना रह लका मे मुख मुझको दिखलाओ।
होकर अपमानित वीर विभीषण धाए, अरु छोड लंक को राम शरण मे आए ॥

शरणागति दे राम ने, कीन्ह अभय तत्काल।
तिलक लंक के राज का, कीन्ह विभीषण भाल ॥७॥

फिर की सलाह सबने लंका जाने की, प्रार्थना कीन्हो नद से पथ पाने की।
करते प्रार्थना बीत गए दिन तीना, पर पथ समुद्र ने नही राम को दीन्हा ॥
तब हो क्रोधित श्रीराम समुद्र सुखाने, झट लगे धनुष पर विद्युत बाण चढाने।
प्रगटा समुद्र झट मूर्तिमान कर बाधे, देखा राघव को क्रोधित धनु को साधे ॥

त्राहिमान हूँ शरण में, रक्षा कीजे राम।
बतलाऊं जिससे बने, सिद्ध आपका काम ॥८॥

नल नील वानरे जो हैं प्रभु के पासा, वे शिल्पकला पंडित हैं बुद्धि विकासा।
वे अपने कर से जो पत्थर डालेंगे, ना डूबेंगे जल मे वे ना हालेंगे ॥
है ऐसा ही उन दोनो को ऋषि श्रापा, सेतु बंधन उनसे करवाओ आपा।
मैं भी पुल को धारण सप्रेम करूंगा, कर्तव्य समझ सेतु को शीश धरूंगा ॥

सुन कर वचन समुद्र के, क्षमा कीन्ह रघुनाथ।
बाण विपिन में छोड़ कर, कीन्ह किरात अनाथ ॥९॥

पाकर आज्ञा वानर बहु इत उत धाए, अरु उठा पहाडो की चट्टानें लाए।
नलनील राम लिखलिखकर शिलाशिखर को, डालेपहाड़ को पाट दिया सागर को ॥
दस योजन चौडा अरु सौ योजन लंबा, लखकर पत्थर का पुल सब कीन्ह अचंभा।
सब धन्यवाद दीन्हा दोनो भाई को, बोले नल नीला धन्य है रघुराई को ॥

रामकृपा से सिंधु में, पत्थर तिरे पहाड़ ।
शिला शिखर डूबे नही, राम नाम की आड़ ॥१०॥

श्री राम कृपा नभ के पेडी लग जावे, श्री राम कृपा चोटी हाथी वन जावे ।
श्रीराम कृपा राई का बने पहाडा, श्री राम कृपा से तिल वन जावे ताडा ॥
बिन राम कृपा के कुछ ना होवे भाई, श्रीराम कृपा माटी सोना वन जाई ।
श्री राम कृपा से बने मूर्ख विद्वाना, श्रीराम कृपा है सकल गुणो की खाना ॥

रामकृपा सबसे बड़ी, उत्तम अमिट महान ।
वेद ब्रह्म सबही कहे, अन्य न एहि समान ॥११॥

दुर्लभ इसको पाना जग मे है भाई, बोले नल नीला रघुपति का यश गाई ।
सुन कर जिसको सब लगे नाचने गाने, तैयारी करने लगे लंक को जाने ॥
श्रीरामचन्द्र अवलोक सेतु बधन को, रमणीय भूमि सागर तट गिरि कानन को ।
कीन्हा विचार शिव लिंग वहा स्थापन का, मुक्ति के दाता हर्ता त्रय तापन का ॥

वेद रीति से रामजी, कर उच्छाव उमंग ।
निज कर से स्थापित किया, रामेश्वर शिव लिंग ॥१२॥

कर सेतु बंध रामेश्वर की फिर पूजा, बोले मुझको ना शिव समान प्रिय दूजा ।
जो शिव को सुमरेगा मुझको पावेगा, शिव का प्रेमी मम प्रेमी कहलावेगा ॥
जो लेगा शिव का नाम करेगा सेवा, वह पावेगा सायुज्य मुक्ति का मेवा ।
वैकुंठ मोक्ष गौलोक स्वर्ग कैलाशा, बिन रोक टोक पहुचेंगे शिव के दासा ॥

महादेव भोले महा, मंगल मूल महान् ।
शिव शंकर शंभु हरि, झट करते कल्याण ॥१३॥

जो शिव शिव शिव शिव हर हर हर हर रटता, उसके अनन्त पापो का रस्सा कटता।
ना देव त्रिलोकी मे है शभु समाना, वह शंभु भजे जो चाहे मुझको पाना ॥
मुझमे औ शिव मे तनिक नही है भेदा, ऋषि मुनि कहते है शिक्षा देते वेदा।
जो सेतुबंध रामेश्वर को जावेगा, वह धर्म धरा धन धाम मोक्ष पावेगा ॥

राम लखन सुग्रीव सब, शिव के सलिल चढ़ाय ।
सेतुबंध चढ़ लक को, चले गणेश मनाय ॥१४॥

जय रामचन्द्र की बोल सकल दल धाए, कर पार सिंधु को लंका के ढिग आये।
घबराया रावण बढा हृदय मे खेदा, भेजे अनेक राक्षस लेने को भेदा ॥
जा आकर राक्षस समाचार बतलाया, सुन कर जिसको रावण का मुख मुरझाया।
चिंतित हो करन लगा रक्षा तैयारी, लंकानगरी के चौतरफा वह भारी ॥

समय पाय मंदोदरी, बोली पिय से आन ।
प्रीतम मम वाणी सुनो, खूब लगा कर ध्यान ॥१५॥

मत रामचन्द्र से झूठा वैर बढ़ावो, उनकी सीता को झट उनको लौटाओ।
श्रीरामचन्द्र मे बल बुद्धि है भारी, है रची हुई उनकी ही सृष्टि सारी ॥
हरि आए है लेकर नरतन अवतारा, मेटन पृथ्वी की पीर पाप का भारा।
ना कभी सकोगे उनसे लड़ कर नाथा, सुन बोला रावण पकड़ प्रिया का हाथा ॥

सावधान ऐसा कभी, कहना मत फिर बोल।
मेरे सम्मुख राम का, बजा बजा कर ढ़ोल ।।१६।।

कह कर इतना चल दिया तुरत लंकेशा, धारण कर शस्त्रों को सैनिक का भेषा।
करके एकत्रित सेनापति सचिवो को, बोला क्रोधित रावण दानव दैत्यो को ।।
आ गए चढाई कर कपि मानव लका, मारो खाओ जावो उनको रण बका।
ना भाग यहाँ से जाने कोई पावे, ना लाघ सिंधु को और न कोई आवे ।।

इतने में ही धम्म से, अंगद कूदे आन।
मची सभा में खलबली, लगे दैत्य सब धान ।।१७।।

झिझका रावण पड गये मुकुट धरती पर, अंगद बोले पछुता रावण गलती पर।
मत डरो बैठ कर सुनो बात सब मेरी, पथ पकडो अब भी यद्यपि हुई अबेरी ।।
मैं रघुराई का दूत संदेशा लाया, कर दया राम ने तुम पर मुझे पठाया।
मत करो तनिक लज्जा सीता लौटावो, चल कर रघुवर के चरणो मे पड़ जावो ।।

बड़े दयालु राम है, शरणागत प्रतिपाल।
उनके भक्तो का कभी, कर न सके कुछ काल ।।१८।।

सुन कर अंगद के वैन दशानन गरजा, बंदर मत बक बक कर चल अपने घर जा।
मैं दूत समझकर छोड रहा हू तुझको, तू नही जानता मम प्रताप को मुझको ।।
मैं महाकाल का काल अमर लंकेशा, मुझसे कापे नभ भू पाताला प्रदेशा।
मैं उठा हिमालय लेता इतना बल है, सुर असुर मेरी मुट्ठी मे जग भूतल है ।।

क्या नर देही राम का, करता मूर्ख बखान।
मेरी समता का नहीं, भू पर वीर महान् ॥१६॥

सुन कर रावण से वोले अंगद वाणी, तूं समझ रहा है हरि को मानव प्राणी।
है तेरी यह मति मद अधर्मी भूला, आया है तेरा काल समय प्रतिकूला ॥
है साक्षात वे हरि नरतन अवतारी, मत कर घमड उनसे रे तुच्छ अनाडी।
वे पल मे करदे प्रलय और पुनि रचना, मत खेल समझ तूं सीता मां को रखना ॥

मै रघुपति का दास हूं, अंगद मेरा नाम।
पांव जमाता सभा में, सुमर सिया पति राम ॥२०॥

मैं देखूं तेरा वल तूं इसे हिलादे, सरका दे इसको वाल मात्र तिल आधे।
तो समझूंगा तूं सीता को रख लेगा, यदि नही उठा तो समझूंगा देदेगा ॥
रावण आज्ञा से आ आ राक्षस सारे, सब इन्द्रजीत औ राक्षस पचि पचि हारे।
ना हिला तनिक अंगद का पाव महांना, तव चला उठाने पाव दशानन दाना ॥

झुका पकड़ने पांव को, जिस वेला लंकेश।
क्षीण हो गया तेज बल, रावण का सब शेष ॥२१॥

आ गयी दया अंगद को वोला चाचा, लौटा दो सिय को मानो मम हित वाचा।
मेरा ना रघुपति का जा पकड़ो पांवा, है वही तुम्हारे लिए शरण का ठावां ॥
तव हो क्रोधित लंकापति राक्षस सारे, टूटे अंगद को मारन विना विचारे।
अंगद सवको कर मूर्छित पटक पछाडा, श्रीराम चरण मे पहुचे जीत अखाड़ा ॥

गिरीश रामायण

अध्याय १७

लंका काण्ड

•

राम लखन सुग्रीव औ, जामवत हनुमंत ।
अंगद कपि नल नील औ, विभीषण मतिमंद ॥१॥

सब लगै विचारन बात समाज बनाई, गंभीर शात बैठे मभ मे रघुराई ।
थे कोटि किरण पति के समान वे शोभित, देवाधिदेव रघुराई नर हरि अभिजित ॥
बोले लक्ष्मण बलधारी वीर प्रबुद्धा, क्या करना ही होगा रावण से युद्धा ।
क्या नही मानता रावण बात हमारी, है धर्म नीति की सच्ची जो हितकारी ॥

ऐसा क्या वह व्याघ्र है, महाकाल भूचाल ।
प्रलय काल का ज्वाल या, महा भयंकर व्याल ॥२॥

जो नही मानता उत्तम बात हमारी, पापी संतापी उन्मत अत्याचारी ।
वह नीच निशाचर तुच्छ पातकी कीड़ा, देता पृथ्वी के प्राणी मात्र को पीडा ॥
पर दारा हरता कामी कपटी मोही, सुर वेद धर्म गौ ब्राह्मण हरि का द्रोही ।
दुर्मुख दुर्बुद्धि अधम मृत्यु का प्यासा, क्या जीने की रखता है अब वह आशा ॥

निगम अगम पथ त्याग कर, श्री हरि से कर द्रोह ।
राम बाण से जो बचा, जीवित जग में कोह ॥३॥

सुन लखनलाल की वीर- गिरा रघुराई, अपने विशाल धनुवा की डोर चढाई ।
मानो सोये सागर मे झझा आया, चेताने रावण पर एक तीर चलाया ॥
जो छत्र मुकुट कुंडल को काट गिराया, अपशकुन देख रावण डोला घबराया ।
मंदोदरि रोकर पाव पकड कर बोली, हितकारी वाणी अमृत सी अनमोली ॥

राम विश्व के नाथ है, लड़ो न उनसे नाथ ।
दे सीता मांगों क्षमा, चरणों में रख माथ ॥४॥

बोला रावण क्या कहती हो तुम किससे, सुर असुर नाग किन्नर डरते हैं जिससे।
हैं इन्द्रजीत से बलशाली मम बेटा, क्या दिखलाना चाहती हो मुझको हेटा ॥
हैं कुंभकर्ण अहिरावण जैसे भ्राता, जिनके बल का जग सारा पता न पाता।
हैं चाद सूर्य वायु यम बंदी मेरे, रहते असंख्य रजनीचर मुझको घेरे ॥

बाल न बांका कर सके, मेरा मानव राम ।
सारी सृष्टि कांपती, सुन रावण का नाम ॥५॥

कह इतना मंदोदरि को दूर धकेला, अरु चला मौत से करने रावण खेला।
चुपचाप राम सेना पर धावा बोला, बरसान लगा भीषण अग्नि के गोला ॥
बोले लक्ष्मण से रामचंद्र रघुराई, क्या नही समझ आई रावण को भाई।
अच्छा रावण कह युद्ध घोषणा करदी, वर्षा बाणो को सारी लंका भरदी ॥

ईश और दस शीश का, छिड़ा युद्ध घमसान ।
सुन्दर लंका बन गई, दैत्यों का शमसान ॥६॥

टूटे वानर भालू राक्षस दैत्यो पर, टिड्डी दल टूटा हो जैसे खेतो पर।
कट कटा दात किलकारी कर कर बंदर, घुस गये घरो के कोठे कोठे अंदर ॥
एक एक राक्षस को ढूंढ ढूंढ कर मारा, मच गया लंक मे भीषण हाहाकारा।
भागे छिपने राक्षस सब प्राण बचाने, पर सके न कोई जीवित बच कर जाने ॥

कटक राम का कड़क कर, विद्युत वज्र समान ।
लंका पर गिर कर दिया, खंडहर और मसान ॥७॥

छोड़े केवल बुड्ढे बालक रोगी को, नारी विनयी या राम भक्त योगी को ।
नदिया वन वहने लगी रुधिर की नलिया, अरु हाडमास मुंडो से भर गयी गलिया ॥
आ चील गीध औ काक लगे सव खाने, गीदड़ विलाव उल्लू कुत्ते चिल्लाने ।
लंका विभत्स हो गई मौत की छाया, दुर्दशा भयंकर लख रावण थर्राया ॥

जगह जगह से आ रही, रोने की चित्कार ।
धू धू लंका जल रही, उछल रहे अंगार ॥८॥

घनघोर गर्जना कर कर कपि दल सारे, अत्याचारी अनगिनत दैत्य दल मारे ।
धुम्राक्ष अकंपन को हनुमत ने मारा, औ वज्रदंष्ट्र को अंगद ने संहारा ॥
प्रहस्त दैत्य वध वीर नील ने कीन्हा, सेनापति को नल ने पछाड चट दीन्हा ।
हो गए लंक के सभी मोर्चे ढीले, पड गए निरीक्षण कर रावण मुख पीले ॥

मेघनाथ औ लखन ने, कीन्ह युद्ध विकराल ।
दूर खड़ा डरता रहा, निकट न आया काल ॥९॥

श्री लखनलाल ने वाण तीव्र एक मारा, जो मेघनाथ को अर्ध मरा कर डारा ।
पहुची पीड़ा प्राणातक घातक भारी, मूर्छित हो भू पर पडा महा निशिचारी ॥
राक्षस भागे रण छोड छोड कर सारे, भगदड मच गई लक्ष्मण के डर के मारे ।
दिन बीत गया संध्या होने को आयी, कर दी लक्ष्मणजी ने जब वंद लडाई ॥

मेघनाथ कर चेत तब, ले कर शक्ति बाण।
क्रोधित हो कर लखन के, मारा हरने प्राण ॥१०॥

थी बद लडाई दिन था छिपने वाला, थे सावधान ना धनुधर लक्ष्मण लाला।
इसलिए लखन हो शक्तिबाण से मूर्छित, गिर पड़े धरणिपर हुए निशाचर हर्षित ॥
बोले लक्ष्मण से लिपट राम रघुराई, हा भ्रात भ्रात हा लक्ष्मण लक्ष्मण भाई।
खोलो अंखिया बोलो मुख से हे वीरा, दुख सुख के साथी जीवन प्राण शरीरा ॥

नैया मम मझधार में, डुबा रहे क्यों वीर।
दिखलाई जब दे रहा, निकट अवध का तीर ॥११॥

कैसे तुम विन मैं अवधपुरी जाऊंगा, जल पीऊंगा तुम विन कैसे खाऊंगा।
रो राम विकल हो करने लगे विलापा, छा गया सैन्य मे महाशोक सतापा ॥
कर झट सम्मति हनुमत लंका को धाये, औ पलक मारते ले सुखेण को आये।
बोले सुखेण उगने से पहिले दिन के, आवे सजीवनि बचे प्राण तब इनके ॥

सुन कर वैद्य सुखेण के, वैन वीर हनुमान।
पा आज्ञा रघुनाथ की, तत्क्षण कीन्ह उड़ान ॥१२॥

झट उडे सजीवनि लाने श्री हनुमाना, पहुचे द्रोणागिरि पर्वत पर बलवाना।
जब सजीवनि हनुमत पहचान न पाये, तब उठा द्रोणगिरि को उखाड उड धाये ॥
जा रहे बचाने लखनलाल का प्राणा, तब आ घुटने पर लगा तीव्र एक बाणा।
था कर मे बोझा द्रोणागिरि का भारी, ना सहन कर सके पीडा को बलधारी ॥

हरे राम कह कर गिरे, पृथ्वी पर हनुमान ।
सुन कर सम्मुख आ खड़े, भक्त भरतजी आन ॥१३॥

हा किस वैरी ने मारा मेरे बाणा, मैं कैसे जाय बचाऊं लक्ष्मण प्राणा ।
भरता बोले सब बात बताओ झट से, हनुमत ने सारी कथा सुनायी चट से ॥
हा हुआ भूल से यह अनर्थ मम हाथा, कर क्षमा लाज रखना लक्ष्मण रघुनाथा ।
तब बोले भरता सुनो भक्त हनुमाना, मत करो तनिक चिंता मन मे बलवाना ॥

पहुँचाऊं मै आपको, अभी राम के धाम ।
श्री चरणों में भरत का, कहना कोटि प्रणाम ॥१४॥

कह भरत बाण पर हनुमत को बैठाया, अरु छोड बाण झट राम समीप पुगाया ।
ना आये हा हनुमत बोले रो रामा, इतने मे ही पहुचे हनुमत बलधामा ॥
पीकर संजीवनि लखन उठे तत्काला, डाली हनुमत के गले राम ने माला ।
फिर बजा वीर लक्ष्मण ने दी रण भेरी, अरु मार मार दैत्यो की कर दी ढेरी ॥

युद्ध हारने लगा जब, रावण होय उदास ।
ढोल नगारे ले गया, कुम्भकरण के पास ॥१५॥

कानो के सम्मुख रखकर ढोल नगारे, अरु लगे बजाने जोर जोर से सारे ।
फिर मारे मुग्दर डंडे भाले भाटे, पर कुंभकर्ण के टूटे ना खर्राटे ॥
दौडाये उसके तन पर घोडे हाथी, अरु नाक कान मे दी कपडो की बाती ।
जब छोड़ी श्वासा लेकर महा जंभाई, उड़ गये निशाचर भीषण आंधी आयी ॥

खाने पीने के लिए, रखे हुए थे ढेर।
उठते ही खाने लगा, करी न पल की देर ॥१६॥

फिर सुन कर सारी बातें रण मे धाया, श्री रामचन्द्र ने मार तुरन्त गिराया।
कपि देव ऋषि गन्धर्व यक्ष हर्षाए, रो रो रावण राक्षस सारे चिल्लाए ॥
श्री लखनलाल ने मेघनाथ को मारा, सुन कर हर्षाया कपि भू मंडल सारा।
जब सुना मरण सुत इन्द्रजीत का रावण, फट गया हृदय नैना बरसे बन सावन ॥

मंदोदरि के शोक का, रहा न पारावार।
सती सुलोचन हो गई, राम हृदय में धार ॥१७॥

जब किया स्मरण तब अहिरावण भट आया, सुनसारी बाते राम शिविर मे धाया।
वह धार विभीषण भेषा कीन्ह प्रवेशा, हर राम लखन पहुंचा पाताल प्रदेशा ॥
जब हुआ सवेरा सब कपीश अकुलाए, खोजन हनुमाना त्रय लोकों में धाए।
था अहिरावण का गृह गढ्ढे मे गहरा, था मुख्य द्वार पर मकरध्वज का पहरा ॥

मकरध्वज हनुमत सुवन, महावीर बलवान।
रोक लिया हनुमान को, दिया न अन्दर जान ॥१८॥

करके परास्त देवी ढिग जा हनुमाना, हो रहे जहां थे राम लखन बलिदाना।
विकराल रूप हनुमत ने अपना धारा, चढ कर छाती पर अहिरावण को मारा ॥
फिर राम लखन को कंधो पर बैठाए, हर्षित हनुमाना नाचत दल मे आए।
जय राम लखन ने गूंज गया आकाशा, जय हनुमान से ध्वनित हो गए स्वासा ॥

बोले सब हे रामजी, घुटे जा रहे प्राण ।
रावण को अब मार कर, शीघ्र करो कल्याण ।।१९।।

आदित्य हृदय का पाठ और कर ध्याना, फिर अस्त्रशस्त्र धारणकर विधिवत नाना।
चढ कर सुरपति के रथ पर श्रीरघुराई, रावण वध करने चले गणेश मनाई ।।
मुखमंडल पर था सूर्य समान प्रकाशा, जा पहुचे रण मे करने रावण नाशा।
सुर ऋषि मुनि मानव युद्ध देखने आए, देवो ने नभ से शंख महान बजाए ।।

अभिमंत्रित कर बाण को, छोडा रघुपति राम ।
वध कर रावण को तुरत, भेज दिया निज धाम ।।२०।।

तब हुई बादशो से पुष्पो की वर्षा नाची सृष्टी नाचा नभ हर्षा हर्षा ।
श्रीरामचन्द्र की जय जय जय कारो से, गूंजी पृथ्वी जय जय की झकारो से ।।
आनन्द छा गया पृथ्वी पर चहु ओरा, वज उठी दुन्दुभि नाच उठे मन मोरा ।
कर वध रावण का रामचंद्र अवतारा, पृथ्वी माता के सर से भार उतारा ।।

डाल गले में राम के, पुष्पों की जय माल ।
कपिमानव ऋषि देव सब, वसुधा हुई निहाल ।।२१।।

फिर घेर राम को सब ने हर्ष मनाया, पूजा कर पुष्पाजलि दे कीर्तन गाया ।
जय रघुपति राघव रावण नाशक रामा, जय कौशल्या दशरथ के सुत सुख धामा।।
जय लक्ष्मण भरत शत्रुहन के प्रियभ्राता, जय सुर ऋषि गौ ब्राह्मण भक्तो के त्राता।
जय सीता पति श्रीराम विश्व हितकारी, जय वेद सनातन धर्म हेतु अवतारी ।।

गिरीश रामायण

अध्याय १८

लंका काण्ड

●

रामाज्ञा से लखन ने, विभीषण के भाल ।
लक राज्य अभिषेक कर, कीन्ह तिलक तत्काल ॥१॥

जय राम राम से गूंज गई सब लंका, पहुचे सीता के ढिग हनुमत रण वंका ।
पड कर चरणो मे मगल वचन उचारे, श्री राम विजय के अतिशय सुन्दर प्यारे ॥
सुन कर सवादा हो आनन्द विभोरी, क्या पुरस्कार दूं बोली जनक किशोरी ।
भू मडल भी ना मुझे दिखाई देता, इस समाचार के सम त्रय लोक समेता ॥

अब कीजे हनुमान हे, ऐसा तुरत उपाय ।
हो जाऊं कृत कृत्य मै, रघुपति दर्शन पाय ॥२॥

सुन सीता जी के वचन भक्त हनुमाना, अच्छा मा कह कर राम निकट झट आना ।
सुन सिय की वाणी हनुमन्ता के मुख से, श्रीराम विभीषण से बोले अति सुख मे ॥
जावो झट से श्री सीता जी को लावो, सिर स्नान करा वस्त्राभूषण पहिनावो ।
आज्ञा पाकर झट वीर विभीषण धाए, ले सग पत्नियो को सिय के ढिग आए ॥

हाथ जोड़ मस्तक झुका, कहे राम के वैन ।
सुन सीता के हृदय में, पड़ी शांति सुख चैन ॥३॥

फिर बिठा पालकी पर सीता को लाए, आ गई सियाजी सुन रघुपति हर्षाए ।
सिय उतर पालकी से पैदल ही आई, डालीसो नीचे झुकी हुई सकुचाई ॥
सब सीताजी को उठ उठ देखन लागे, सोये सीता के भाग्य आज पुनि जागे ।
लज्जित सीता ने नयन उठाए अपने, श्री रामचन्द्र प्रियतम के दर्शन करने ॥

कर दर्शन रघुनाथ के, सीता हुई निहाल।
विन दर्शन दुर्भाग्य से, वंचित थी बहुकाल ॥४॥

करके प्रणाम चरणो मे सिय सुख पाई, खिल उठी हृदय की कली कली मुरझाई।
श्री रामचद्र को वार वार अवलोका, भूली पल मे पिछला सारा दुख शोका ॥
कर अनुपम राम चरण के निकट निवासा, ली सीता ने पीडा तज सुख की स्वासा।
इतने ही मे वोले रघुपति भगवाना, सीता का और सभा का खेचत ध्याना ॥

कल्याणी सीते प्रिये, धन्य हुआ मै आज।
पा कर तुम को सन्निकट, सफल मनोरथ काज ॥५॥

पर क्या वोलू कहने की वात नही है, तुम्हरे सत पर ना लाछन लगा कहीं है।
फिर भी तुम को पर घर वहु काला वीता, मैं कैसे ग्रहण करूं अव तुमको सीता ॥
है मेरे सम्मुख जटिल समस्या भारी, लोकापवाद की भीषण कारी कारी।
विख्यात वश रघुकुल के लगे कलंका, जन करे तुम्हारे जव्र चरित्र पर शका ॥

प्राणनाथ क्या कह गए, अति कठोर हा मोय।
इतने जन समुदाय में, वोली सीता रोय ॥६॥

वह पडी सिया के नैनो से जलधारा, हो गया क्षुव्ध जन वायु मण्डल सारा।
कुछ काल रही सव ओर उदासी भारी, कर मौन भंग वोली भारत की नारी ॥
मिल गई मुझे नारी जीवन की शिक्षा, देनी होगी अव मुझ को अग्नि परीक्षा।
उत्तीर्ण यदि मै इस मे हो जाऊंगी, तो नारी जाति का यश फैलाऊंगी ॥

कह कर इतना सियाजी, मंगा काष्ठ का ढ़ेर।
अग्नि लगा दी तुरत ही, करी न पल की देर ॥७॥

घू घू धक धक कर जली काष्ठ की ढेरी, ज्वाला की लपटे फैली हुई न देरी।
श्रीराम लखन हनुमान सभी अकुलाए, सब मौन रहे कोई कुछ बोल न पाए॥
सब देख रहे थे सीता जी का मुखडा, रोके मन मे ही मन का सारा दुखडा।
सबके सम्मुख था अतिशय भीषण काला, छू रही गगन को धधक धधक कर ज्वाला॥

रामचंद्र जी खड़े थे, नीचे ग्रीवा कीन्ह।
सीता जी ने परिक्रमा, राम अग्नि के दीन्ह ॥८॥

श्री रामचन्द्र के चरण छोड कर दूजे, स्वप्ने मे भी यदि कभी किसी के पूजे।
यदि मम चरित्र मे होवे लगा कलका, मन कर्म वचन मे थोड़ी सी भी शका॥
कर जोड अग्नि से बोली सीता माता, तो जला भस्म कर देना मेरा गाता।
कह कर सीता ने कीन्हा अग्नि प्रवेशा, रोमाचित हो गए सुन नर किन्नर शेषा॥

सिय अग्नि में जब गिरी, अग्नि परीक्षा देन।
चकित रह गए देखते, सकल सभा के नैन ॥९॥

हो गई सिया को शीतल ज्वाला ऐसी, गगा के जल सी शीतल छाया जैसी।
साकार रूप धर अग्नि देवता आए, देने सतीत्व की साखी सिय संग लाए॥
अग्नि बोले हे रामचन्द्र भगवाना, है सीता परम पवित्र विशुद्ध महाना।
मैं देता साखी ग्रहण सिया को कीजे, है निष्कलक सीता हे रघुपति लीजे॥

ग्रहण सिया को जब करी, रामचंद्र भगवान ।
पुष्पों की आकाश से, वृष्टी हुई महान ॥१०॥

वह तपी स्वर्ण सी चमकी कुन्दन जैसी, वह स्वर्ण कमलिनी उज्वल विद्युत भेषी ।
श्री रामचन्द्र पा सीता को सुख पाए, सुर नर मुनि कपि भालू अनन्त हर्षाए ॥
श्री लखन विभीषण जामवन्त हनुमाना, सुग्रीव नील नल अंगद वीर महाना ।
हो गए सभी के सफल मनोरथ काजा, लका मे सजने लगे स्वर्ण सुख साजा ॥

असवारी श्री राम की, गढ लंका के मांह ।
जब निकसी तब हो गई, फूलों की परछांह ॥११॥

जय सियाराम से गूंज गया नभ सारा, ना पाया स्वागत समारोह का पारा ।
दशरथ महाराजा इन्द्र लोक से आए, श्री राम लखन सीता से मिल सुख पाए ॥
दे शुभाशीश औ शिक्षा दशरथ राजा, फिर दिव्य लोक मे चले गए महाराजा ।
शिवशकर ब्रह्मा इन्द्र कुबेर अंनगा, नारद शारद किन्नर गन्धर्व भुजंगा ॥

तीन लोक चौदह भवन, सब मिल एक हि साथ ।
विनय कीन्ह श्री राम की, हर्षित जोड़े हाथ ॥१२॥

हे सत्य प्रेम की प्रतिमा वेद पुराणा, हे स्वर्ग मुक्ति हे दिव्य लोक कल्याणा ।
हे पृथ्वी नभ पाताल सबो के कर्त्ता, हे जीव जन्तु जग पालक पोषक भर्ता ॥
हे धर्म अर्थ हे काम मोक्ष के दाता, हे मात पिता गुरु सखे सहोदर भ्राता ।
हे मर्यादा पुरुषोत्तम रघुपति रामा, हे परम ब्रह्म परमेश्वर पूरक कामा ॥

दीन बन्धु हे रामजी, दया सिंधु रघुनाथ।
रखते सदा गरीब के, भक्तों के सर हाथ ॥१३॥

सुन कर प्रार्थना रामचन्द्र सकुचाए, आभार प्रदर्शित कर मन मे मुस्काए।
फिर कर कर मिलन सबो से श्री भगवाना, लंका नगरी से कीन्ह् अवध प्रस्थाना ॥
वन मे रह करके चौदह वर्ष बिताए, पुष्पक विमान पर बैठ अवध को धाए।
जब चले रामजी अवधपुरी की ओरा, आनन्द छा गया ठौर ठौर सब छोरा ॥

सिया राम श्री लखन के, उमड़ हृदय आनंद।
छलक छलक कर छा गया, रोम रोम सब अंग ॥१४॥

श्री सीताजी को रामचन्द्र दिखलाते, सब स्थान और उनका परिचय करवाते।
मिलते ऋषियो मुनियो से रुकरुक रामा, पूछत सबसे शुभ कुशल क्षेम वृत कामा ॥
पड़ पड चरणो मे ले ले शुभ आशीशा, गौ ब्राह्मण भक्तो के रक्षक जगदीशा।
केवट गुह से मिल मन उत्साह् बढाए, जहं भरत भ्रात थे नन्दिग्राम मे आए ॥

मिले भरत से राम जी, चौदह वर्ष बिताय।
बरसे बादल प्रेम के, सुख ना हृदय समाय ॥१५॥

आ रहे रामजी सुन कर अवध निवासी, दौडे स्वागत करने तज घोर उदासी।
चौदह वर्षो से लौट रहे हैं रामा, चिर काल प्रतिक्षित रघुवर मंगल धामा ॥
ऊंची नीची पृथ्वी को समतल कर दी, पथ चौराहो पर स्वर्ण कलशिया धर दी।
कर दिया सुगन्धित शीतल जल छिडकावा, चन्दन का बूरा पुष्प परागा लावा ॥

गली गली घर घर डगर, हलचल मची अपार।
ध्वजा पताका कलश से, सजे सकल घर द्वार॥१६॥

सोने चादी रत्नो के तोरण खंभे, चमके चन्दा तारो से चौड़े लम्बे।
सुनहरी पुष्प की पंचरंगी मालाएं, फल धूप आरती लिए खडी बालाएं॥
देवस्थानो मे विजय घंट के नादा, घन घना उठे घन घन कर महा निनादा।
बज उठे अनेको जगह जगह पर बाजे, बन्दनवारो से सारी नगरी साजे॥

अवध पुरी के मिल सकल, नर नारी लघु बाल।
स्वागत की तैयारियां, कीन्ह तुरत तत्काल॥१७॥

जगमग जगमग जग उठी दीपमालाएं, चम चम चम चम चम चमक उठी शालाए।
करने स्वागत श्रीराम सिया का भारी, चल दिए सामने पुर वासी नर नारी॥
शत्रुहन मंत्री मुखिया औ व्यौपारी, सारी सेना हाथी घोडे रथ भारी।
कौशल्या कैकइ और सुमित्रा माई, गुरुवर बसिष्ठ चल दिए सकल हर्षाई॥

जब पहुँचे श्री राम जो, अवध पुरी में आय।
दर्शन करने प्रजा का, उमड़ पड़ा समुदाय॥१८॥

हर्षध्वनि युत कोलाहल का ना पारा, जयजय की ध्वनियां से गूंजा नभ सारा।
आ गए राम का समाचार जब फैला, तब गली गली घर घर मे लग गया मेला॥
सब लगे देवताओ के भेंट चढाने, उत्सव कर कर सब लगे नाचने गाने।
जन जन के मन मे आनन्द आज अथाहा, पशु नाचे पक्षी गाए करे उछाहा॥

हरे हो गए शुष्क सब, लता वृक्ष फल फूल।
राम चरण छू अवध की, चन्दन बन गई धूल ॥१९॥

जब निकसी राम सिया की भ्रमण सवारी, तब दर्शन करने झुक गयी छतें अटारी।
गा गा मंगल गीतो को हर्षा हर्षा, केशर चन्दन फल फूलो की कर वर्षा ॥
अभिनन्दन जन ने कीन्ह राम का ऐसा, ना सुना कभी देखा पृथ्वी पर जैसा।
श्रीराम प्रजा के प्रेमी मित्र महाना, हो रहे प्रकाशित अगणित सूर्य समाना ॥

राम सिया श्री लखन के, दर्शन कर सब लोग।
सायुज्य मुक्ति पा गए, सकल योग औ भोग ॥२०॥

दे अर्घ्य पाद्य कर पूजा और प्रणामा, हो गए सभी जन सफल मनोरथ कामा।
जब मिले मात से चरणो मे पड रामा, तब पृथ्वी पर आ उतरा स्वर्ग ललामा ॥
गुरुवर वसिष्ठ के चरणो मे रख माथा, ले शुभाशीश श्रीराम त्रिलोकी नाथा।
फिर हुए राज मंदिर मे उत्सव नाना, अरु मिले प्रजा से स्नेह सहित भगवाना ॥

नद नदियों का जल मंगा, औषध डाल अनेक।
सप्त ऋषि ने विधिवत, कीन्ह राम अभिषेक ॥२१॥

ऋषि ब्राह्मण साधु सतो को श्रीरामा, दे दान अनन्ता कीन्हा चरण प्रणामा।
श्रीराम राज्य का जग मे पिटा ढिंढोरा, छा गया विश्व मे सुख ही सुख चहुं ओरा ॥
ना रहा पाप का भू पर तनिक निवासा, सब लेन लगे स्वाधीन सुखो की स्वासा।
जय सिया राम की हिल मिल सभी उचारे, जय हनुमान की बोल रहे जन सारे ॥

गिरीश रामायण

अध्याय १६

उत्तर काण्ड

●

राम राज्य की दुंदुभि, बजी मधुर सब ठौर ।
धर्म राज्य ऐसा कभी, हुवा न जग मे और ॥१॥

श्री राम राज्य मे हुए सभी जन सुखिया, ना रहा एक भी भू मडल पर दुखिया ।
जिसको कोई भी थोडा सा दुख होता, तो राजा राम समीप पहुच कर रोता ॥
श्री राम तुरत करते उसका दुख दूरा, करते उसका श्रीराम काम सब पूरा ।
मिलने मे करते नही पलक की देरी, ना रोक टोक करते थे चाकर चेरी ॥

राम राज्य दरबार में, रोक किसी को नांय ।
किसी समय भी प्रेम से, जो जी चाहे जाय ॥२॥

छोटे मोटे सब की सुनवाई होती, ना भटक भटक फिर फिर कर जनता रोती ।
ना व्यर्थ समय अरु धन दोनो का व्यय था, ना भिन्न राम से कोई न्यायालय था ॥
ना बाल मात्र भी पक्षपात चलती थी, ना निर्णय देने मे होती गलती थी ।
जो जैसा करता था वैसा पाता था, बस न्याय कराने कभी कोई आता था ॥

राम राज्य में न्याय की, जगती ज्योति अखड ।
अपराधी सब आप ही, पाते थे सब दड ॥३॥

ना प्रथम कोई कुछ भी करता था दोषा, धारण कर रखा था सबने संतोषा ।
जितनाजिसको निजभाग सत्व से मिलता, ना छोड़ उमे मन कभीकिसी का हिलता ॥
थे लगे निरन्तर सभी धर्म अपने मे, ना करते कोई पाप कर्म सपने मे ।
सबके आचरण बहुत अच्छे उज्वल थे, सब ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शुद्र निर्मल थे ॥

राम राज्य में विप्रगण, करके धर्म प्रचार।
प्राणिमात्र का जगत का, करते थे उद्धार ॥४॥

पढते थे सब विद्याए और पढाते, करते यज्ञो को स्वय यज्ञ करवाते।
लेते दानो को और दान को देते, कर त्याग तपस्या धर्म नाव को खेते॥
थे जगदगुरु आचार्य आर्य भू देवा, करते थे आठो याम धर्म की सेवा।
श्रीराम सदा उनकी पूजा करते थे, अपना सर उनके चरणो पर धरते थे॥

रामराज्य में क्षत्रि गण, बन शासक रखवार।
रक्षा करते देश की, धर्म कर्म अनुसार ॥५॥

राजा महाराजाओ के राज कुमारा, तज राज भोग सामग्री औ घर द्वारा।
रह रह कर ऋषि आश्रम मे शिक्षा पाते, सब विद्याओ मे निपुण पूर्ण हो जाते॥
फिर बागडोर शासन की दृढ पकडते, तन मन धन से रक्षा स्वदेश की करते।
रहते सतर्क वे ध्वजा धर्म की धारे, बन कर सैनिक शासक राजा रखवारे॥

राम राज्य में वैश्य गण, सत्य धर्म को धार।
गो पालन करते कृषि, और शुद्ध व्यौपार ॥६॥

मन्दिर विद्यालय धर्म स्थान बनवाते, अरु स्थान स्थान पर अन्न क्षेत्र लगवाते।
ना करते अपने पास इकट्ठा धन को, देते सहायता धन की थे सब जन को॥
जब जब स्वदेश को आवश्यकता होती, तब तब करते न्यौछावर हीरे मोती।
व्यय करते धन को राष्ट्रोन्नति कर्मो मे, यज्ञो मे दानो मे वैदिक धर्मो मे॥

राम राज्य में शूद्र गण, सेवा व्रत को धार।
सेवा करते द्विजों की, तन मन से कर प्यार ॥७॥

था मुख्य धर्म शूद्रो का सेवा करना, सेवा की नैया से भवसागर तरना।
ब्राह्मण क्षत्री वैश्यों को करके सेवा, पा जाते थे झट शुद्र मुक्ति का मेवा ॥
करके सत्सगति गाते हरि गाथा को, रटते निश दिन सीता पति रघुनाथा को।
था शूद्रो का बस सेवा ही एक कर्मा, था शूद्रो का बस सेवा ही एक धर्मा ॥

राम राज्य में सभी जन, रख स्वधर्म को ध्यान।
एक दूसरे का सदा, करते थे सम्मान ॥८॥

ना कभी किसी की निन्दा कोई करते, ना कभी किसी की वस्तु कोई हरते।
सब पुरुष समझते पर दारा को माता, सब नारी जोती पर पुरुषो को भ्राता ॥
सब प्राणी मात्र को अपनी तरह समझते, पशु पक्षि भी श्री राम राम को भजते।
सब रामराज्य की कहते यही कहानी, सिंह बकरी पीते एक घाट पर पानी ॥

राम राज्य में थे सभी, सुखी सुरक्षित प्रांत।
मूषक बिल्ली खेलते, बाज चिड़ी संग शान्त ॥९॥

ना डर था जग मे किसी बात का कोई, ना सुनी कभी भी वस्तु किसी की खोई।
सब भूत मात्र निर्भय होकर सोते थे, ना कलह लड़ाई युद्ध कही होते थे ॥
सब रहते थे मिलकर कुटुम्ब की नांई, सबके ऊपर थी राम छत्र की छाई।
था आर्यावर्त उन्नत समृद्ध महाना, थी सभी भांति की सुविधा स्वर्ग समाना ॥

राम राज्य में भरे थे, अन्न वस्त्र भंडार।
जीवन के उपयोग की, वस्तु का ना पार ॥१०॥

घी दूध दही माखन की नदिया बहती, घर घर मे लाखो गो माताएं रहती।
ना खाने पीने की चीजे बिकती थी, बहुअल्प मूल्य से सब चीजे मिलती थी ॥
कोई भूखा नगा ना रह पाता था, करते सब स्वागत जब अतिथि आता था।
साधु सन्यासी ब्राह्मण सन्त पुजारी, थे सर्व सुखी सन्तोषी शान्त सुखारी ॥

राम राज्य मे स्वार्थ का, तनिक नहीं था नाम।
परमार्थ करते सभी, सज्जन शुद्ध अकाम ॥११॥

अधिकाश व्यक्ति तो गुप्त दान करते थे, सब ठौर दान के झरने से झरते थे।
थी कमी किसी भी वस्तु की ना कोई, जो चाहता उसको मिलती वस्तु सोई ॥
घर स्वास्थ्य और शिक्षा का ना था क्लेश, था आर्यावर्त सब भांति समुन्नत देश।
जन धन गो कृषि विद्या बुद्धि औ बल मे, सभ्यता संस्कृति कला और कौशल मे ॥

राम राज्य मे धुरन्धर, थे शिक्षक विद्वान।
ज्ञान और विज्ञान के, पंडित गुरु महान ॥१२॥

साहित्य गीत सगीत नृत्य के ज्ञाता, स्थापत्य कलाविद चित्र मूर्ति निर्माता।
नाना प्रकार के वाद्य बजाने वाले, मंडप प्रदर्शिनी मंच सजाने वाले ॥
रथ हाथी घोडे अस्त्र शस्त्र सचालक, जल थल वायुयानो के अनुपम चालक।
पशु पक्षी की सब बोली जानन वाले, ज्योतिष के ज्ञाता शकुन बतावन वाले ॥

राम राज्य में सकल जन, पंचामृत कर पान ।
हृष्ट पुष्ट सुस्वस्थ थे, उत्तम आयुष्मान ॥१३॥

सबकी सहस्र वर्षो की तो आयु थी, थे खाद्य पदार्थ निर्मल जलवायु थी।
सब गंगा जमुना के तट पर रहते थे, कर नित्य नेम श्रीराम कथा कहते थे ॥
वन उपवन मे फल फूल लगे थे नाना, थे दुर्लभ वैसे स्वर्ग लोक मे पाना।
भारत वसुधा सब वनस्पति देती थी, बारह महीनो होती रहती खेती थी ॥

राम राज्य में मजे से, मिलती रोटी दाल ।
कभी न आई बाढ़ औ, कभी न पडा अकाल ॥१४॥

ना अतिवृष्टि ना अनावृष्टि होती थी, सब भांति सदा जनता सुख से सोती थी।
षट ऋतु मे षट रस भोजन सबको मिलते, घर घर आगन मे पुष्प अनेको खिलते ॥
पूजा होती थी तुलसी वट पीपल की, थी छटा आम्र फल कदलीफल श्रीफल की।
होते थे नित प्रति उत्सव मंगल मेले, व्यायाम प्रदर्शन उछल कूद के खेले ॥

राम राज्य में धर्म की, शिक्षा घर घर मांय ।
वेद पाठ पूजा विधि, हरि कीर्तन सब गांय ॥१५॥

गो ब्राह्मण की सेवा पूजा सब करते, गुरु मात पिता की आज्ञा सर पर धरते।
पढ पढ कर सब जन वैदिक शास्त्र पुराणा, करते थे मानव जीवन का कल्याणा ॥
था मानव का बस लक्ष एक ही ध्याना, करके सुकर्म श्रीराम पद्म पद पाना।
पति सेवा मे नारी रहती थी लीना, अरु सास ससुर की सेवा मे तल्लीना ॥

राम राज्य मे धर्म युत, करते सभी निवास।
ब्रह्मचर्य औ गृहस्थी, वानप्रस्थ सन्यास ॥१६॥

ब्रह्मचारी गुरुकुल मे रह शिक्षा पाते, भिक्षा की झोली ला सब मिल जुल खाते।
करते गृहस्थ चारो आश्रम का पोषण, ना करते जन का तनिक कभी भी शोषण ॥
वन मे रह दपति वानप्रस्थ साधत थे, कर नित्य कर्म स्वाध्याय धर्म मे रत थे।
सन्यासी कर कर भ्रमण और उपदेशा, जागृत करते थे अखिल विश्व के देशा ॥

राम राज्य मे थे सभी, सच्चे पक्के लोग।
योग साधते थे सभी, तुच्छ समझ कर भोग ॥१७॥

करते निशि वासर सभी भजन भरपूरा, रह काम क्रोध मद मोह लोभ से दूरा।
पाखंड पाप हिंसा असत्य का कामा, छल कपट द्वेष ईर्ष्या का ना था नामा ॥
ना एक दूसरे को धोखा देते थे, बिन दिए किसी की वस्तु नही लेते थे।
था मानस सबका शुद्ध विशाल महाना, पौरुष विक्रम मे थे सब एक समाना ॥

राम राज्य में प्रजा सब, थी सब भाति प्रसन्न।
सप्त धातु औ धान्य से, वस्त्रो से सम्पन्न ॥१८॥

थे सस्कृत भाषी सभी गुणो के सागर, तेजस्वी तपसी सभ्य आर्य नर नागर।
सज्जन सत्सगी साधु संत वैरागी, मन कर्म वचन से सत्य धर्म अनुरागी ॥
भौतिक तान्त्रिक बौद्धिक वैदिक वैज्ञानिक, जिनका यश फैला था पृथ्वी पर चहुदिक।
सबके विकास उन्नति के सब साधन थे, ना किसी तरह की बाधाऔ बंधन थे ॥

राम राज्य की यश ध्वजा, उड़ी गगन के मांय।
शासन की सुव्यवस्था, सब देखन को आय ॥१६॥

थे गगन चुंवी प्रासाद मनोहर मदिर, थी भारत भूमि स्वर्ग लोक से सुन्दर।
फल फूलो के उद्यान लगे थे नाना, थे तीन लोक मे दुर्लभ वैसे पाना॥
इच्छा करते थे देव यहा आने की, भारत भूमि मे मानव तन पाने को।
राजा जैसे थे तैसी सकल प्रजा थी, भारत गौरव की उन्नत धर्म ध्वजा थी॥

राम राज्य मे पुण्य की, वहती निर्मल गग।
यज्ञ धूम से शुद्ध थे, सबके घर मन अग ॥२०॥

श्री राम राज्य का फैला पुण्य प्रतापा, सातो सुख सवको सहज प्राप्त थे आपा।
ना विधवा होती थी कोई भी नारी, ना विना पुत्र के देखी कही दुखारी॥
मा वाप सामने नही पुत्र मरते थे, अनुचित करते यमराज सदा डरते थे।
ना हुए कभी ना होगे ऐसे राजा, मानव ही क्या कहता था देव समाजा॥

राम राज्य था प्रकाशित, उज्वल सूर्य समान।
राम राज्य की कीर्ति का, गाते थे सब गान ॥२१॥

श्री भरत लखन श्री शत्रुहन हनुमाना, थे राम राज्य के रक्षक स्तभ महाना।
विप्रो की आज्ञा से होते सव काजा, गो विप्रो के थे दास प्रजा अरु राजा॥
सब राज्य कर्मचारी थे धर्म परायण, सव रामचरित का करते थे पारायण।
जय राम राम करते थे सब नर नारी, श्रीराम राज्य मे थे सब परम सुखारी॥

गिरीश रामायण

अध्याय २०

उत्तर काण्ड

●

राम सिया के संग में, देख रहे थे चित्र।
अ त:पुर के कक्ष में, चित्रित विविध विचित्र ॥१॥

लख धनुष यज्ञ का चित्र रामजी बोले, सकुचाई सिय जहं खड़ी नयन अध खोले।
कर मे थी उनके पुष्पो की वर माला, जहं तोड़ धनुप को रामचन्द्र ने डाला ॥
देखो सीते यह मधुर मिलन का मेला, कितनी सुन्दर मंगलमय थी यह वेला।
सुन वचन राम के सीताजी सकुचाए, अरु धीरे धीरे चंचल चरण चलाए ॥

गमन देख वन राम का, कांपा सिय का गात।
राज पाट को छोड़कर, सिया लखन संग जात ॥२॥

करुणा के आसू वहे सिया नैनन से, दुख हुआ ज्ञात श्री रघुवर के वैनन से।
उस समय न रोई गमन किया जव वनको, अव चित्रदेख करती हो क्यो वचपन को॥
वह देखो सीते भरत मिलन का मेला, श्री चित्रकूट की चित्रित मनहर वेला।
लख भरत मिलन का चित्र सियाजी मोहे, उत्सुक आखे फूली कलियो सी सोहे ॥

पड़ी अचानक दृष्टि जब, पंचवटी पर जाय।
सीता आंखें मीच कर, लिपट गई घबराय ॥३॥

श्री राम सिया से वोले मत डरपाओ, यह रावण का है चित्र अभय हो जाओ।
हर कर तुमको ले जाता था जव रथ को, तव भक्त जटाजु ने रोका था पथ को ॥
वह देखो सीते वाल्मीकि का आश्रम, जिसके ऊपर न्यौछावर है स्वर्गाश्रम।
कितना सुन्दर है हराभरा यह उपवन, फल फूलो को लख पुलकित होते तन मन ॥

ऋषि आश्रम के चित्र को, देख सिया हर्षाय ।
बोली रघुपति से वचन, मधुर मधुर मुस्काय ॥४॥

इक वार पुन. हे आर्य पुत्र मम मन मे, इच्छा होती है जाने की उपवन मे ।
कुछ काल वहा पुनि जाकर करू निवासा, क्या शीघ्र करेगे नाथ पूर्ण मम आशा ॥
बोले अवश्य ही सीता से रघुराई, जाकर देखोगी वन -की सुन्दरताई ।
वन जाने की अति शीघ्र व्यवस्था होगी, स्वच्छद वायु वन श्री का जा सुख लोगी ॥

जो भी इच्छा हो प्रिये, करू पूर्ण तत्काल ।
बोले सियपति स्नेह से, डाल गले कर माल ॥५॥

इस छवि की मंजुल शोभा सुन्दरताई, नव जलधर मे विद्युत सम देत दिखाई ।
हो खिली कमल कलिका ज्यो नीले सर मे, आई हो उषा प्राची प्रिय के घर मे ॥
प्रगटी हो जैसे यज्ञ धूम मे ज्वाला, पहिनी हो रति ने नील कमल की माला ।
हो गगा सागर संगम मनहर जैसे, श्री राम सियाजी शोभित होते तैसे ॥

इसी समय मे बज उठा, कार्य विभाजक घंट ।
बंदी चारण भाट के, गूंज उठे मधु कंठ ॥६॥

जय रघुपति राघव राम प्रजा हितकारी, जय धर्म मूल जय सत्य रूप अघहारी ।
जय वेद सनातन गो ब्राह्मण के त्राता, जय सखे सुहृद जय मात पिता गुरु भ्राता ॥
जय शिव मंगल जय जय अनंत सुखकारी, शुभ दर्शन के हित खडी प्रजा तव प्यारी ।
दीजे दर्शन कर कृपा नाथ भक्तो को, चरणो के चाकर प्रेमी अनुरक्तो को ॥

बंदी गण के गान को, सुन प्रफुल्ल रघुनाथ ।
अन्त पुर से चल दिए, परिजन गण के साथ ।।७।।

कर भेंट गुप्तचर बोला रघुराई को, जी हा धोबी ने पर सीता माई को ।
सब जनता अच्छी आखो से जोती है, क्या खरी चीज रघुपति खोटी होती है ।।
सीता सीता ही है उस सम ना कोई, ना सती विश्व मे सीता के सम होई ।
कर सकती समता स्त्री ना जग मे जिनकी, झूठी बातें है सब धोबी धोबिन की ।।

उस धोबी की बात में, तानिक नही है सार ।
मत धोबी की बात पर, कीजे नाथ विचार ।।८।।

अच्छा दुर्मुख मैं सोचूं गा तुम जाओ, झट जाकर कोई शीघ्र लखन को लावो ।
इतना कह कर निज भवन गए रघुराई, गहरी चिंता की छाया मुख पर छाई ।।
बोले मन ही मन मे हा कैसा जग है, इस जग का कैसा टेढा मेढा मग है ।
पद पद पर होता सोच समझ कर चलना, योजन योजन पर खडी नगरिया छलना ।।

आशा तृष्णा मोह के, महल बने भर पूर ।
ज़ाना है जिस देश को, वह भारी है दूर ।।९।।

जीवन पथ मे कितनी बाधाए आती, आगे बढने पर भीषण रोक लगाती ।
पथ रोक विध्न पर्वत सम्मुख डट जाते, गहरे समुद्र मे पाव न बढने पाते ।।
पर कहता है कर्तव्य बढो हे आगे, रुकने का लो मत नाम बनो न अभागे ।
साहस भर कर दृढता से पाव बढाओ, जाना है तुमको जहा पहुच तुम जाओ ।।

इतने ही में आगए, हर्षित लक्ष्मण लाल ।
क्रीट मुकुट कुण्डल धनुष, धारे मुक्ता माल ॥१०॥

क्या आज्ञा है हे नाथ कहो अनुचर से, बोले झुककर श्री लखनलाल रघुवर से ।
जब बोले ना श्री राम लखन फिर बोले, क्यो मौन हो रहे नाथ नही क्यो बोले ॥
आ गए लखन तुम आओ बैठो भाई, इक नई समस्या फिर उलझन ले आई ।
सुलझाना होगा उसको भी जीवन मे, सीता को जाना होगा पुन विपिन मे ॥

छोड़ उसे आना तुम्हे, होगा वन मे तात ।
वाल्मीकि आश्रम निकट, होते उदित प्रभात ॥११॥

सुन कर आज्ञा लक्ष्मण का सर चकराया, हिल उठा हृदय थर थर थर तन कम्पाया ।
क्या कहा नाथ यह कैसी विकट विपद है, ना समझ रहा हू दुर्गम विषय विशद है ॥
क्यो सीता मा को भेज रहे है वन मे, क्यो दया नही आती रघुवर के मन मे ।
क्या यही समस्या हल करने का पथ है, मैं हाक सकूंगा कैसे वन को रथ है ॥

नाथ शीघ्र समझाइए, सेवक को यह बात ।
सुन लक्ष्मण के वचन को, बोले श्री रघुनाथ ॥१२॥

सीता मुझको प्राणो से भी है प्यारी, पर मर्यादा उससे भी उत्तम भारी ।
मर्यादा रखने को हम जग मे आए, चाहे मर्यादा के हित सब कुछ जाए ॥
मर्यादा रक्षा के बिन झूठा जीना, है व्यर्थ विश्व मे सब मर्यादा हीना ।
मर्यादा हित हमने वन कीन्ह प्रयाणा, मर्यादा के हित तजे पिता ने प्राणा ॥

मर्यादा ही मुख्य है, राम राज्य का अंग।
मर्यादा को राम भी, सके न करने भंग ॥१३॥

बस इसीलिए सीता को वन जाना है, मैं सह न सकूं लोकापवाद ताना है।
बोले लक्ष्मण श्री रघुराई को ताना, हा भाई लक्ष्मण सुनो लगा कर ध्याना॥
हे लक्ष्मण मुझको अरु सीता को कोई, कह दे छोटे मुंह बडी बात अनहोई।
मुझको उसका भी निराकरण करना है, मर्यादा रक्षा हित जीना मरना है॥

इक धोबी की बात है, बोला आधी रात।
कर धोबिन पर क्रोध औ, मार कमर पर लात ॥१४॥

जा चली जहा से आई वही अभागी, ना रही काम की मेरे तुझ को त्यागी।
पर घर जो नारी करले तनिक निवासा, उसके सतित्व पर कौन करे विश्वासा॥
मेरे घर मे अब तेरा काम नही है, जो रखले घर सीता को राम नही है।
कह कर इतना बस हुए मौन रघुनाथा, झुक गए राम लक्ष्मण दोनो के माथा॥

लगी तीर सी लखन के, उस धोबी की बात।
घायल की ज्यों तडफते, बीती सारी रात ॥१५॥

होते ही प्रात. रथ ले कर के धाए, श्री लखन सिया के अन्तःपुर पर आए।
आगए लखनजी देख सिया मुसकाई, अरु चढ कर रथ पर लक्ष्मण के सग धाई॥
श्री राम झरोखे से विव्हल उस पथ को, थे देख रहे इकटक उस जाते रथ को।
मानो धीरज को छोड़ जा रही आशा, मानो प्राणो को छोड़ जा रही स्वासा॥

राम देखते ही रहे, जब तक दीन्ह दिखाय ।
दिखा न रथ जब सिया का, पड़े राम मुर्झाय ।।१६।।

सीते सीते निकला उनकी स्वासों से, वह निकले आसू झर झर कर आखो से ।
फिर बढ़ा राम के तन मन मे संतापा, अरु जोर जोर से करने लगे प्रलापा ।।
लक्ष्मण लक्ष्मण ठहरो ठहरो हे भाई, रो पडे जोर से रघुपति राम रंभाई ।
फिर दौडे सीते सीते सीते करते, भिडते भीतो से उठते डिगते पडते ।।

हुई दशा यह राम की, दे सीता वनवास ।
समझ न पाए बात को, राज महल के दास ।।१७।।

धीरे धीरे रथ चल कर वन मे आया, बोली सीता कैसा वसन्त है छाया ।
देखो लक्ष्मणजी पत्र पुष्प फल जल को, नीले पीले अरु हरे लाल वन थल को ।।
बस यही रोकलो रथ उतरूंगी नीचे, कितने सुन्दर है यहा विशाल बगीचे ।
तितली मृग भँवरे मोर चकोर कपोता, कोकिल सूए खरगोश हंस जल गोता ।।

वन की वायु बह रही, शीतल मन्द सुगन्ध ।
निर्झर गिरिसर कमल तरु, करते मन आनन्द ।।१८।।

जब सीता माता उतरी नीचे रथ से, तब लक्ष्मण गद्गद् हो गए निष्प्रभ हत से ।
है यह क्या देवर आखो मे क्यो पानी, मम शपथ तुम्हे होगी सच बात बतानी ।।
इतने मे ही लक्ष्मण का धीरज टूटा, रो कर बोले हे भाभी माथा फूटा ।
क्या बोलूं कुछ कहने की बात नही है, हा धंसी जा रही भाभी आज मही है ।।

जाता हूँ मैं छोड़ कर, वन में तुम को मात।
यही आर्य आदेश था, कही लखन सब बात ॥१६॥

क्या कहा त्याग दी मुझको रघुराई ने, मेरे स्वामी ने लक्ष्मण के भाई ने।
सुध बुध भूली सी सीता सोच न पाई, गिर पडी हृदय पर बिजली मानो आई॥
सच नही झूठ है हो सकता ना ऐसे, बिन सिया राम हा रह सकते है कैसे।
दौडो दौडो हे राम शीघ्र से आवो, दुःस्वप्न आ रहा मुझको शीघ्र जगावो॥

स्वप्न नही यह सत्य है, सीते सोच विसार।
राम नाम रख हृदय में, वन में करो विहार ॥२०॥

है कौन आप जो कहते स्वप्न नही है, क्या मेरे निकट न स्वामी राम कही है।
बोली सीता सर पकड जोर से रो कर, मैं जीऊंगी कैसे रघुवर को खो कर॥
मुझ निरपराधिनी को दीन्हा वनवासा, थी कभी न रघुपति से मुझको यह आशा।
क्या हृदय राम का हो सकता है ऐसा, निर्मम कठोर पाषाण वज्र के जैसा॥

हृदय राम का है सरल, कोमल कमल समान।
मर्यादा के हित किया, अर्ध अंग बलिदान ॥२१॥

चल कर आश्रम मे बेटी करो निवासा, मगलकारी होवे तुम को वनवासा।
एक दिन आवेगा राम यहा आवेंगे, औ माग क्षमा तुम से वहु पछितावेंगे॥
श्री सिया राम मे तनिक नही है भेदा, है सिया राम औ राम सिया अविवेदा।
सुन ज्ञान गिरा श्री सीता जी सुध लाई, श्री वाल्मीकि के संग आश्रम मे धाई॥

गिरीश रामायण

अध्याय २१

उत्तर काण्ड

•

सीता मां के पुत्र दो, लव कुश वीर महान ।
सब विद्याओ में निपुण, सकल गुणों की खान ॥१॥

एक दिन एक अश्व पकड आश्रम मे लाए, हंसते उमंग से फूले नही समाए।
मा देखो कैसा अच्छा है यह घोडा, है कठिन विश्व मे मिलना इसका जोड़ा ॥
सीता मा बोली इसे कहाँ पर पाया, यह हाथ तुम्हारे तात कहा से आया।
मुसका कर बोले लव कुश दोनो भ्राता, बहु श्रम से पकडा इसको वन मे माता ॥

इतने ही में आगए, घोड़े के रखवार ।
शस्त्रो से सज्जित सकल, सैनिक सबल अपार ॥२॥

जिसने पकडा घोडा वह झट पट आवे, अपना पौरुष वल विक्रम हमे दिखावे ।
सुन कर यह वाणी लव कुश दोनो भाई, पहुचे घोड़े संग सेना सम्मुख जाई ॥
लख जिनकी वीराकृति सेनापति डोले, ताने छाती उन्नत मस्तक कर बोले ।
हमने पकडा है बोलो क्या कहते हो, क्यो आए वन मे आप कहा रहते हो ॥

बल पौरुष को देखना, जो चाहे सो आय ।
करना चाहे युद्ध जो, अपना शस्त्र उठाय ॥३॥

सुन कर सेनापति हंस मुसका कर बोले, क्या बोल रहे हो तपसी बालक भोले ।
दे दो घोड़ा हम अपने पथ को जावे, श्री रामचन्द्र की विजय ध्वजा फहरावें ॥
सुन रामचन्द्र का नाम तमक कर लव कुश, बोले आगे बढ निर्भय सेना मे घुस ।
को रामचन्द्र जिसने रावण को मारा, दशरथ कौशल्या सुवन सिया पति प्यारा ॥

हा सेनापति ने कहा, वही अवध के राम।
वड़े प्रेम से सकल जन, लेते जिनका नाम ॥४॥

है उन्हीं राम का यह घोड़ा ब्रह्मचारी, पकड़ा क्यों तुमने बड़ी भूल कर डारी।
श्री रामचन्द्र ने अश्वमेध का घोड़ा, सम्राट चक्रवर्ती बनने को छोड़ा ॥
छोड़ो छोटो झट पट घोड़े को भाई, होंगे क्रोधित यदि राम बात सुन पाई।
लव मुसकाए कुश हंसे और फिर बोले, हम भी चाहत है यही राम आ जोले ॥

वल पौरुष का है जिन्हे, गौरव और घमड।
उनसे लड़ने के लिए, फड़क रहे भुज दण्ड ॥५॥

ना छोड़ेंगे घोड़ा जा उनसे कह दो, तपसी श्रीमत से लड़ना चाहत है दो।
अपना वल पौरुष विक्रम हमें दिखावें, कर विजय हमें घोड़ा अपना ले जावें ॥
सुन कर सेनापति क्रोधित हो झल्लाया, क्या कहते हो बालक यह शस्त्र उठाया।
लव कुश ने भी अपने धनुषों को ताना, छिड़ गया युद्ध विकराल महा घमसाना ॥

इतने ही में आ डटे, लखन भरत हनुमान।
ले सेना चतुरंगिणी, शत्रुहन वलवान ॥६॥

हिल उठा विश्व धूजे धरती आकाशा, लव कुश ने कीन्हा सब सेना का नाशा।
कितने ही सैनिक प्राण बचा कर भागे, जा अवध राम को कथा सुनावन लागे ॥
संग्राम भयंकर हुआ महा घनघोरा, अग्नी बाणों की वर्षा से चहु ओरा।
मूर्छित हो लक्ष्मण भरत शत्रुहन भाई, पड़ गए पृथ्वी पर हनुमान वलदाई ॥

वाल्मीकि औ सिया मां, आश्रम के सब बाल ।
चकित रह गए देखते, भीषण युद्ध कराल ॥७॥

कुछ समय बीतने पर रघुराई आए, मूर्छित लख सबको मन मे बहुत लजाए।
कर अमृत वर्षा सब को चेत कराया, पा रघुराई को सब के मन सुख छाया ॥
वासन्ती पुलकित दौडी आ कर बोली, श्री राम दर्श कर भर लो मन की झोली।
आ गए राम आगए राम मा सीते, आई अमृत वेला दुख के दिन बीते ॥

लगी नाचने हर्ष से, बासंती सुकुमार ।
मोरे आंगन रामजी, लाए आज बहार ॥८॥

मोरे आगन मे आज रामजी आए, खिल उठे आज मम नयन कमल मुरझाये।
बज उठी हृदय की वीणा कर झकारें, मन मोर नाचने लगा करन मनुहारे ॥
मम अंग अ ग मे फूल उठी फुलवारी, मम रोम रोम से कोकिल बोले प्यारी।
मैं कैसे स्वागत करूं वस्तु क्या लाऊं, श्री राम चरण के योग्य भेंट कहं पाऊ ॥

बासंती के वैन सुन, सीता मां हर्षाय ।
गद्गद् हो रोने लगी, आनंद अश्रु बहाय ॥९॥

इतने हो मे श्री वाल्मीकि जी आए, सीते सीते की अविरल ध्वनि लगाए।
सीते बेटी सीते बेटी झट आओ, कर राम चरण के दर्शन अति सुख पाओ ॥
आगए राम आगए राम मम धामा, हो गए आज मम पूर्ण सफल मन कामा।
है धन्य भाग मम आज राम घर आए, सुर दुर्लभ मैंने सकल मनोरथ पाए ॥

गद्गद् होकर सिया मां, बोली रुक रुक वैन ।
कांप रहा था गात सब, अश्रु झर रहे नैन ॥१०॥

हे पिता पापिनी मैं सब समय रही हू , मैं राम चरण के दर्शन योग्य नही हू ।
मैं परित्यक्ता हूं वनोवासिनी सीता, मेरा जीवन घट बिन सतीत्व के रीता ॥
मेरे फूटे माथे पर लगा कलका, है राम प्रभु को मम चरित्र पर शका ।
मैं मरी नही ना जीवित ही हूं ताता, श्री राम चरण ढिग मुझसे गया न जाता ॥

मैं बैठी ही दूर से, करती उन्हे प्रणाम ।
क्षमा करेंगे एक दिन, मुझको मेरे राम ॥११॥

क्या कहती हो बेटी तुम ऐसे कैसे, तुम हो पवित्र गंगा माता की जैसे ।
तुम हो सतियो की सती शपथ खाता हूं, तुम्हरे चरित्र मे दोष न कुछ पाता हू ॥
तुम अग्नि परीक्षा मे उत्तीर्ण हो सीता, फिर क्यों होती झूठी मन मे भयभीता ।
दुर्बलता छोडो झूठी शका त्यागो, श्री राम पधारे द्वार तुम्हारे जागो ॥

पूछेंगे श्रीराम से, लेकर दृढ़ विश्वास ।
किस कारण से सिया को, दीन्ह आप बनवास ॥१२॥

आश्रम ब्रह्मचारी बोले आकर ताता, लव कुश दोनो भिड गए राम से माता ।
हैं कह कर सीता वाल्मीकि जी भागे, आश्रम ब्रह्मचारी दौडे उनसे आगे ॥
लव कुश दोनो क्रोधित तीरो को ताने, श्री रामचद्र की छाती पर सधाने ।
साकार वीर रस की वह अनुपम जोडी, ललकार रही थी ताने छाती चौडी ॥

राम शांत गंभीर थे, नीचे ग्रीवा कीन्ह ।
देख रहे थे भूमि को, मुख मलीन मन दीन ॥१३॥

हो वही राम न जिसने जीती लंका, अरु निरपराधिनी पत्नि पर की शका ।
ले अग्नि परीक्षा फिर भी नही अघाए, हे राम आपका यश जग कैसे गाए ॥
गर्भिणी सिया को हा अबला नारी को, अर्धांगिनी पत्नि रानी सुकुमारी को ।
बिन दोष हाय बिन कहे दिया वनवासा, हे राम आप पर कौन करे विश्वासा ॥

सती साध्वी सिया को, दे करके वनवास ।
राम आपने खो दिया, जनता का विश्वास ॥१४॥

लेते अबला की लाज न आई लाजा, क्या न्याय इसी को कहते है महाराजा ।
बोलो बोलो क्यो मौन हो रहे रामा. क्या किया आपने उचित न्याय का कामा ॥
कह इतना लव कुश लगे छोडने तीरा, लव कुश लव कुश ठहरो ठहरो हे वीरा ।
है ! कौन सिया हा यहा कहा तुम प्यारी, ये कौन तुम्हारे तेजस्वी ब्रह्मचारी ॥

बाल्मीकि जी ने कहा, ये सीता के लाल ।
राम आपके पुत्र है, लव कुश वीर विशाल ॥१५॥

सुनते ही सब हो चकित देखने लागे, सोए सीता के भाग्य आज पुनि जागे ।
देखत ही रह गए इकटक श्री रघुराई, चरणो पर चढ गए लव कुश दोनो भाई ॥
श्री राम उठा लव कुश को गले लगाया, श्री वाल्मीकि जी ने फिर वचन सुनाया ।
श्री राम शपथ है सिया सती अपनाओ, सादर सीता को राम अवध ले जाओ ॥

सीता परम पवित्र है, बोले रघुपति राम ।
दे प्रमाण पुनि शुद्धि का, तब लेजाऊं धाम ॥१६॥

सुनते ही सोया नारी गौरव जागा, प्रगटा सतीत्व औ मोह तिमिर को त्यागा ।
बोली सीता कड़की बिजली सी वाणी, सुनलो जग के सब सुर नर मुनि पशु प्राणी ॥
मन कर्म वचन से राम चरण से दूजा, सपने मे भी ना कभी किसी का पूजा ।
यदि शुद्ध सती सम है मम सब आचरणा, तो फटो पृथ्वी मा दो मुझको तुम शरणा ॥

सुनते ही पृथ्वी फटो, सीता गई समाय ।
पकड न पाए रामजी, निकसा मुख से हाय ॥१७॥

दो क्षमा मुझे हे सीते सीते प्यारी, ना सती विश्व मे तुम सम कोई नारी ।
हो गई परीक्षा आओ आओ आओ, मत छोड राम को एकाकी तुम जाओ ॥
मा मा कह कर लव कुश दोनो चिल्लाए, पर लौट न आयी सिया राम पछिताए ।
यह अघटित घटना देख राम चकराए, नभ से देवो ने पत्र पुष्प बरसाए ॥

पार्वती शिव चरण में, रख कर बोली माथ ।
रामायण सुन आपसे, धन्य हो गई नाथ ॥१८॥

ना सुनी कभी ऐसी गौरव मय गाथा, मगलकारी कल्याणी पशुपति नाथा ।
सुन पार्वती के वचन शभु शिव भोले, यह देवो को भी दुर्लभ है प्रिय, बोले ॥
जो रामायण का पूजन पाठ करेगा, वह बडी सरलता से भव सिंधु तरेगा ।
जो श्रद्धा भक्ति से इसको गावेगा, वह भक्त राम का राम कृपा पावेगा ॥

राम कृपा से जगत मे, होत सफल सब काम ।
बड़े दयालु राम है, बड़े कृपालु राम ॥१६॥

हो कृपा राम की होय शक्ति बिन संघे, औ मूक होय वाचाल पंगु गिरि लघे ।
निर्बल मे बल आ जाय मूर्ख मे बुद्धि, निर्धन बन जाए धनी पातकी शुद्धि ॥
कुटिया बन जाए महल रक का राजा, हो राम कृपा से सिद्ध सकल जग काजा ।
श्री राम कृपा अ धे को डगरी मिलती, श्री राम कृपा से मुरझी कलिया खिलती ॥

काक भुशडी गरुड़जी, सुन कर यह संवाद ।
हाथ जोड़ शिव सती से, बोले कर आल्हाद ॥२०॥

जो सुन पढ पावेगा यह कथा पुनीता, श्री रामायण यह भक्त गिरीश प्रणीता ।
वह धर्म अर्थ औ काम मोक्ष पावेगा, जो सत्संगति मे बैठ इसे गावेगा ॥
ब्राह्मण होगा विद्वान क्षत्रि सम्राटा, धनवान होएगा वैश्य शूद्र शुचि गाता ।
रोगी होवेगा स्वस्थ क्लीव हो वीरा, क्रोधी होवेगा शात अधीरा धीरा ॥

रामयण पूरी हुई, सिया राम आधार ।
दो हजार अरु आठ को, होली मगलवार ॥२१॥

जय सियाराम जय सियाराम सिया रामा, करते भक्तो का सफल सकल मन कामा ।
जय राम लखन जय भरत शत्रुहन भाई, करते भक्तो की रक्षा सदा सहाई ॥
जय कौशल्या जय दशरथ जय हनुमाना, जय अवधपुरी जय भारतवर्ष महाना ।
जय राम राम जय राम राम जय रामा, जय राम राम जय राम राम जय रामा ॥

॥ इति शुभम् ॥

एक राष्ट्रीय चेतनापूर्ण अपूर्व रचना

"गीता गान"

जय जननी, जय जन्मभूमि, जय भारत मां जय हिन्दुस्थान।
तेरी रज रज के कण कण मे, गूंज रहा है "गीता-गान"॥

तू चित्तौड़ की ज्वाला बन जा,
हल्दी घाटी की हुँकार।
तू प्रताप का भाला बन जा,
अमरसिंह की अमर कटार॥

तू मीरां की माला बन जा,
हाडी रानी की तलवार।
तू झाला का झाला बन जा,
झासी वाली की झकार॥

धर्म, देश, जाति के नाते, करदे तन, मन, धन बलिदान।
अमर रहेगी जग मे गाथा, अमर रहेगा जग मे दान॥

रचयिता
"गिरीश"

मूल्य २) दो रुपये

प्राप्ति स्थान
गिरीश कला मन्दिर
पो० सुजानगढ़ (राज०)